शकुन टाइम्स

निष्पक्ष खबरें निर्भीक आवाज

लखनऊ, रविवार 09 मार्च 2025 नगर संस्करण | पृष्ठ:-8 मूल्य:-4 रूपया | वर्षः- 14, अंक 64

नेपाल में फिर लौट आएगा राजतंत्र... ● लखनऊ से प्रकाशित हिन्दी दैनिक समाचार पत्र ● टेबल टेनिस के दिग्गज शरत कमल ने.....

संक्षिप्त समाचार

हिज्बुल मुजाहिदीन का आतंकी जम्मू कश्मीर से गिरफ्तार

मुरादाबाद। यूपी एटीएस ने 18 साल से फरार हिजबुल मुजाहिदीन के आतंकवादी को जम्मू एंड कश्मीर से गिरफ्तार किया है। आतंकी जनपद पूंछ, जम्मू एंड कश्मीर का रहने वाला है। बताया गया की मुरादाबाद पुलिस ने आतंकवादी उल्फत हुसैन पर 25000 का इनाम घोषित कर रखा था। उल्फत हुसैन मुरादाबाद के थाना कटघर से एक मुकदमे में फरार चल रहा था। उल्फत हुसैन पुत्र हाजी अताउल्लाह खान , ग्राम फजलाबाद, सुरनकोट, जिला पूंछ जम्मू एंड कश्मीर का मूल निवासी है और राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में संलिप्त रहा है। आतंकवादी उल्फत हुसैन शस्त्र अधिनियम, पोटा, व सीएल एक्ट में मुरादाबाद के थाना कटघर से वांछित है। जमानत पर छूटने के बाद वो फरार गया था। मुरादाबाद कोर्ट से उसके खिलाफ वारंट जारी हुआ था। आतंकवादी उल्फत हुसैन वर्ष 2001 में मुरादाबाद आया था और इसे 9 जुलाई को गिरफ्तार कर इसके पास से एक एके-47, एक एके 56 सहित दो पिस्टल 12 हैंड ग्रेनेड, 39 टाइमर 50 डेटोनेटर सहित भारी मात्रा में गोला बारूद बरामद किया गया था।

स्कूटी सवार तीन युवकों की गहरी खाई में गिरने से मौत

देहरादून। उत्तराखंड के रुद्रप्रयाग जनपद में शुक्रवार देर रात्रि एक दोपहिया वाहन (स्कूटी) अनियंत्रित होकर गहरी खाई में जा गिरी जिसमें स्कूटी सवार सभी तीन युवकों की मौके पर ही मृत्यु हो गई। शवों को राज्य आपदा मोचन बल (एसडीआरएफ) की टीम ने अंधेरी रात्रि में काफी परिश्रम के बाद खाई से निकालकर मुख्य सड़क तक पहुंचाया। एसडीआरएफ प्रवक्ता ने शनिवार को बताया कि कल देर रात्रि जिला नियंत्रण कक्ष के माध्यम से एसडीआरएफ टीम को दुर्गाधार चोपता के पास एक स्कूटी खाई में गिरने की सूचना मिली। सूचना पर पोस्ट रतूड़ा से उपनिरीक्षक आशीष डिमरी के नेतृत्व में आवश्यक रेस्क्यू उपकरणों के साथ एक रेस्क्यू घटना स्थल पहुंची। जहां स्कूटी संख्या- यूके 13बी 2344 कुंडा दानकोट के पास अनियंत्रित होकर सड़क से लगभग 100 मीटर नीचे गहरी खाई मे गिरकर दुर्घटनाग्रस्त मिली। उन्होंने बताया कि स्कूटी पर सवार अंकित (27) पुत्र प्रताप लाल, निवासी गुनियाल पोखरी, टीटू (23) पुत्र राकेश लाल, निवासी कुंडा दानकोट और संदीप (27), निवासी ग्राम बरसील, सभी जनपद रुद्रप्रयाग निवासियों की मौके पर ही मृत्यु हो चुकी थी। प्रवक्ता ने बताया कि एसडीआरएफ रेस्क्यू टीम ने डीडीआरएफ टीम के साथ मिलकर, रात्रि के घनघोर अंधेरे व विषम परिस्थितियों में कड़ी मशक्कत के बाद तीनों लोगों को खाई से निकालकर स्ट्रेचर के माध्यम से मुख्य मार्ग तक लाया गया।

गृहमंत्री के निर्देश के बाद एक्शन में दिल्ली पुलिस

बांग्लादेशी घुसपैठियों के खिलाफ जारी है अभियान

एजेंसी

नई दिल्ली। दिल्ली पुलिस राजधानी के अलग-अलग इलाकों में रह रहे अवैध बांग्लादेशी प्रवासियों की पहचान के लिए सत्यापन अभियान चला रही है। आज दिल्ली पुलिस ने दिल्ली के वसंत कुंज स्थित जय हिंदी कैंप में अवैध प्रवासियों के खिलाफ सत्यापन अभियान चलाया।

इससे पहले दिल्ली पुलिस ने काली बाड़ी मार्ग के पास जेजे कॉलोनी इलाके में सत्यापन अभियान चलाया था। संगम विहार और मंदिर मार्ग में भी इस तरीके का अभियान चलाया जा चुका है। सब-इंस्पेक्टर रवि मलिक ने बताया कि

हम उनके सत्यापन के लिए उनके सभी पहचान-पत्र मांगते हैं। अगर हमें कोई संदिग्ध लगता है, तो उसके पहचान-पत्र सत्यापन के लिए उसके संबंधित जिलों में भेज दिए जाते हैं। अगर हमें कोई अवैध रूप से यहां रहता हुआ मिलता है, तो उसे निर्वासित कर दिया जाता है। उसके सभी विवरणों का सत्यापन किया जाता है। इस वर्ष जनवरी में दिल्ली के उपराज्यपाल वीके सक्सेना ने पुलिस को राष्ट्रीय राजधानी में रह रहे बांग्लादेशी प्रवासियों की पहचान के लिए एक विशेष मिशन शुरू करने का निर्देश दिया था।

दिल्ली चुनाव में अवैध बांग्लादेशी प्रवासियों का मुद्दा खूब उठा था। भाजपा के सत्ता में आने के साथ ही इसके खिलाफ अभियान में तेजी देखी जा रही है। वहीं, केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने दिल्ली पुलिस के शीर्ष अधिकारियों को राजधानी में बांग्लादेशियों और रोहिंग्याओं सहित अनधिकृत प्रवासियों से निपटने के दौरान स्पष्ट और त्वरित कानूनी दृष्टिकोण अपनाने का निर्देश दिया। बैठक में शामिल एक वरिष्ठ अधिकारी ने बताया, फिलहाल, उन कॉलोनियों में ऑडिट किया जा रहा है, जहां बांग्लादेशियों और रोहिंग्याओं की बड़ी आबादी रहती है। इन अवैध कब्जेदारों को रहने में मदद करने वालों और उन्हें फर्जी दस्तावेज हासिल करने में मदद करने वालों के खिलाफ भी सख्त कार्रवाई की जाएगी।

मोदी ने अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर शुभकामनाएं दी

एजेंसी

नयी दिल्ली। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर शुभकामनाएं दी। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने शनिवार को एक्स पर लिखा कि हम महिला दिवस के अवसर पर अपनी नारी शक्ति को नमन करते हैं!

हमारी सरकार हमेशा महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए काम करती रही है, जो हमारी योजनाओं और कार्यक्रमों में परिलक्षित होता है। आज, जैसा कि वादा किया गया था, मेरी सोशल मीडिया पर उन महिलाओं का कब्जा होगा जो विभिन्न क्षेत्रों में अपना अमिट छाप छोड़ रही हैं! उन्होंने कहा कि मैं सभी महिलाओं, विशेषकर युवा लड़कियों को एक संदेश देना चाहता हूं कि अपने सपनों का पीछा करें, चाहे कितनी भी बाधाएं उत्पन्न हो। आपका जुनून आपकी सफलता को शक्ति देगा। मैं महिलाओं को उनके सपनों का पीछा करने और जिस किसी क्षेत्र का वे चुनाव करें, बाधाओं को तोड़ने के लिए प्रोत्साहित करना चाहता हूं क्योंकि मुझे पता है कि वे कर सकती हैं!

अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी में खेली जाएगी होली, प्रशासन ने लिया फैसला

एजेंसी

अलीगढ़ की मुस्लिम यूनिवर्सिटी में होली मनाने पर रोक लगाए जाने के बाद बवाल मच गया था। अब यूनिवर्सिटी ने इस फैसले से रोक हटा दी है।

यूनिवर्सिटी विरोध देखने के बाद बैकफुट पर आई है। एएमयू प्रशासन ने यूनिवर्सिटी के एनआरएससी हॉल में होली खेलने की इजाजत दी है। एबीपी न्यूज के मुताबिक हॉल के प्रोवोस्ट प्रो बी बी सिंह का कहना है कि जिन छात्रों को होली खेलनी है वो 13 और 14 मार्च को यहां आकर होली खेल सकते है।

प्रोफेसर सिंह का कहना है कि होली के लिए दो दिन तक ये हाल छात्रों के लिए उपलब्ध होगा। जानकारी के लिए बता दें कि कुछ दिन पहले ही एनआरएससी हॉल में होली खेलने के लिए छात्रों ने अनुमति मांगी थी। मगर यूनिवर्सिटी प्रशासन ने इसकी अनुमति देने से इनकार कर दिया था।

डोनाल्ड ट्रंप का बड़ा दावा

टैरिफ में कटौती करने पर सहमत हो गया है भारत

एजेंसी

नई दिल्ली। संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने दावा किया कि भारत ने आखिरकार टैरिफ में कटौती करने का फैसला किया है। ट्रंप की यह टिप्पणी ऐसे समय में आई है जब उन्होंने कहा कि अमेरिकी वस्तुओं पर शुल्क लगाने वाले देशों पर पारस्परिक टैरिफ 2 अप्रैल से लागू होंगे। ट्रंप ने कहा कि भारत हमसे बहुत ज़्यादा टैरिफ़ वसूलता है। बहुत ज़्यादा। आप भारत में कुछ भी नहीं बेच सकते। वैसे, वे सहमत हो गए हैं; वे अब अपने टैरिफ़ में कटौती करना चाहते हैं क्योंकि कोई तो आख़िरकार उनके किए की पोल खोल रहा है। अमेरिकी राष्ट्रपति ने यह भी कहा कि

संयुक्त राज्य अमेरिका को ठगा गया है और इसे रोकना होगा। मैंने अपने पहले कार्यकाल में इसे रोक दिया था और अब हम इसे वास्तव में रोकने जा रहे हैं क्योंकि यह बहुत अनुचित है। आर्थिक दृष्टिकोण से, वित्तीय दृष्टिकोण से और व्यापार दृष्टिकोण से, हमारे देश को दुनिया के लगभग हर देश ने ठगा है। ट्रंप ने यह भी कहा कि अभी टैरिफ अस्थायी और छोटे हैं, लेकिन प्रमुख टैरिफ जो पारस्परिक प्रकृति के होंगे, 2 अप्रैल से शुरू होंगे और वे हमारे देश के लिए एक बड़ा गेम चेंजर होंगे। वहीं, भारत ने शुक्रवार को कहा कि वह अमेरिका के साथ द्विपक्षीय व्यापार समझौते के जरिये शुल्क और गैर-शुल्क बाधाओं को कम करने सहित व्यापार संबंधों को मजबूत करने पर विचार कर रहा है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के अपने व्यापार साझेदारों पर जवाबी शुल्क की घोषणा करने के कुछ दिनों बाद यह बात कही गई। ट्रंप ने अपनी अमेरिका फर्स्ट नीति के तहत दो अप्रैल से कई व्यापार साझेदारों पर जवाबी शुल्क की घोषणा की, जो अमेरिका से आयात पर अधिक शुल्क लगाते हैं। इस पर पहली प्रतिक्रिया देते हुए भारत ने संकेत दिया कि वह इस मुद्दे के सौहार्दपूर्ण समाधान की उम्मीद करता है।

जम्मू से श्रीनगर की सुबह की उड़ान एक अप्रैल से होगी शुरू

जम्मू। नागर विमानन प्राधिकरण ने यात्रियों विशेषकर सरकारी अधिकारियों और व्यापारियों को राहत प्रदान करने के उद्देश्य से एक अप्रैल से जम्मू से श्रीनगर के बीच सुबह की उड़ान शुरू करने की मंजूरी प्रदान कर दी है। केंद्रीय मंत्री डॉ. जितेंद्र सिंह ने एक्स पर कहा, यह सेवा एक आम शिकायत का समाधान करने के लिए शुरू की गयी है, जो अधिकतर सरकारी अधिकारियों और व्यापारियों की ओर से आयी थी कि जम्मू से श्रीनगर के लिए सुबह की कोई ह्वाई उड़ान नहीं है। इसके कारण, उनके लिए एक ही दिन में आवागमन करना मुश्किल हो जाता था। उन्होंने आगे कहा नागर विमानन अधिकारियों को इस संबंध में एक प्रस्ताव दिया गया था, जिन्होंने एक अप्रैल 2025 से जम्मू से श्रीनगर के लिए सुबह 10 बजे एक नियमित दैनिक ह्वाई उड़ान शुरू करने पर सहमति व्यक्त की है।

जीएसएलवी क्रायो स्टेज इंजन का कई बार पुनः आरंभ रहा सफल: इसरो

एजेंसी

चेन्नई। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने जीएसएलवी के क्रायोजेनिक ऊपरी चरण के साथ स्पार्क टॉर्च इग्नाइटर का उपयोग करके प्रक्षेपण यान चरणों के प्रज्वलन परीक्षण का कई बार पुन: आरंभ सफलतापूर्वक पूरा किया है।

एक अपडेट में, इसरो ने कहा कि वह अगले पीढ़ी के प्रक्षेपण यान के लिए लॉक्स-मीथेन इंजन और चरणों का विकास कर रहा है, जिसमें एक पुनः प्रयोज्य बूस्टर चरण और दो नष्ट होने वाले ऊपरी चरणों का उपयोग किया जाता है। इस विन्यास में, बूस्टर चरण की पुनर्प्राप्ति के लिए

एकाधिक पुन: आरंभ आवश्यक होंगे, साथ ही मिशन लचीलेपन के लिए ऊपरी चरण को पुन: आरंभ करना भी आवश्यक होगा। तमिलनाडु के महेंद्रगिरि स्थित इसरो का द्रव नोदन प्रणाली केंद्र (एलपीएससी) भविष्य के लॉक्स-मीथेन चरणों के लिए स्पार्क टॉर्च इग्नाइटर विकसित कर रहा है, जिसके निम्नलिखित लाभ होंगे- मल्टी-रीस्टार्ट क्षमता, उच्च प्रज्वलन विश्वसनीयता और स्वच्छ दहन उत्पाद आदि। तीन मार्च 2025 को, स्पार्क टॉर्च इग्नाइटर का एक प्रदर्शन मॉडल जीएसएलवी क्रायोजेनिक उपरी चरण वर्नियर इंजन का उपयोग करके सफलतापूर्वक परीक्षण किया गया, जिसमें ईंधन के रूप में गैसीय ऑक्सीजन और गैसीय हाइड्रोजन का उपयोग किया गया। यह परीक्षण एलपीएससी के दहन अनुसंधान सुविधा में किया गया और सुचारू प्रज्वलन प्राप्त किया गया। यह परीक्षण कुल तीन सेकंड की अवधि के लिए किया गया और परीक्षण के दौरान प्राप्त सभी इंजन पैरामीटर सामान्य और अपेक्षा के अनुरूप थे। इसरो ने कहा कि प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए आगामी परीक्षण की भी योजना बनाई गई है।

व्यवस्था बदलेगी तो संभल सीओ अनुज चौधरी जैसे लोग जेल में होंगे: रामगोपाल यादव

लखनऊ। संभल के सीओ अनुज चौधरी होली पर अपने बयान को लेकर समाजवादी पार्टी के निशाने पर आ गए हैं। सपा के राष्ट्रीय महासचिव और अखिलेश यादव के चाचा रामगोपाल यादव ने शुक्रवार को इस बारे में साफ चेतावनी भी दे दी। रामगोपाल ने अनुज चौधरी के बयान पर यहां तक कह दिया कि व्यवस्था बदलेगी तो ऐसे लोग जेल में होंगे। पहले भी अपने बयानों और कार्यों के कारण अनुज चौधरी चर्चा में रहे हैं। कभी वर्दी में ही शोभायात्रा में हनुमान जी की गदा लेकर चलने को लेकर तो कभी मंच से भजन को लेकर उन पर निशाना साधा गया है। अब नए मामले में होली को लेकर मुसलमानों को दिया गया उनका सुझाव वायरल है। इस बार होली रमजान की जुमा यानी शुक्रवार को पड़ रही है।

गुजरात में फुलप्रूफ प्लान के साथ उतरेगी कांग्रेस

पार्टी नेताओं के साथ राहुल ने की बड़ी बैठक, दिया चुनाव जीतने का मंत्र

एजेंसी

अहमदाबाद। गुजरात में भाजपा को हराने के लिए एक मजबूत योजना पर ध्यान केंद्रित करते हुए, लोकसभा में विपक्ष के नेता राहुल गांधी ने पूर्व अध्यक्षों, पूर्व विपक्ष के नेताओं, राजनीतिक मामलों की समिति के सदस्यों, जिला शहर अध्यक्षों और राज्य के विभिन्न प्रकोष्ठों के पदाधिकारियों के साथ बातचीत की।

इसके अलावा आज अहमदाबाद में उन्होंने एक सभा को संबोधित भी किया। उन्होंने कहा कि हमें यहां सत्ता में आए करीब 30 साल हो गए हैं। जब भी मैं यहां आता हूं, 2007, 2012, 2017, 2022, 2027 के विधानसभा चुनावों की चर्चा होती

है। लेकिन सवाल चुनाव का नहीं है। कांग्रेस नेता ने आगे कहा कि जब तक हम अपनी ज़िम्मेदारियां पूरी नहीं करेंगे, गुजरात की जनता हमें चुनाव नहीं जिताएगी। जब तक हम अपनी ज़िम्मेदारियां पूरी नहीं करेंगे, हमें गुजरात की जनता से सत्ता में आने के लिए भी नहीं कहना चाहिए। मैं आपको गारंटी देता हूं कि जिस दिन हम ऐसा करेंगे, गुजरात की जनता कांग्रेस पार्टी को अपना समर्थन देगी। राहुल ने कहा कि जब कांग्रेस पार्टी को अंग्रेजों का सामना करना पड़ा, तो हम हर जगह नेतृत्व की तलाश कर रहे थे। अंग्रेज हमारे सामने थे, कांग्रेस पार्टी भारत के लोगों का प्रतिनिधित्व करती थी, लेकिन हमारे पास कोई नेता नहीं था।

इजरायली पर्यटक समेत 2 महिलाओं के साथ गैंगरेप

साथियों को नदी में फेंका, एक की मौत

एजेंसी

हंपी। कर्नाटक के विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल हम्पी के पास एक चौंकाने वाली घटना सामने आई है। यहां इजरायल की एक 27 वर्षीय पर्यटक और एक होमस्टे चलाने वाली महिला के साथ कथित तौर पर गैंगरेप किया गया। यह घटना गुरुवार रात करीब 11:30 बजे तब हुई, जब दोनों महिलाएं सानापुर झील के किनारे बैठकर तारों को निहार रही थीं। इस घटना में एक पुरुष पर्यटक की मौत हो गई है। पुलिस के अनुसार, पीड़ित महिलाएं तीन अन्य पुरुष पर्यटकों के साथ थीं, जिनमें एक अमेरिकी नागरिक और दो भारतीय (महाराष्ट्र और

ओडिशा से) शामिल थे। ये सभी तुंगभद्रा नहर के पास संगीत सुनते हुए रात का आनंद ले रहे थे। इसी दौरान तीन अज्ञात लोग मोटरसाइकिल पर वहां पहुंचे। शुरुआत में आरोपियों ने पेट्रोल के लिए पूछताछ की और फिर इजरायली पर्यटक से 100 रुपये की मांग की। जब उन्होंने पैसे देने से इनकार किया, तो बहस शुरू हो गई। इसके बाद आरोपियों ने पुरुष पर्यटकों पर हमला किया और उन्हें नहर में धक्का दे दिया। फिर उन्होंने दोनों महिलाओं के साथ गैंगरेप किया और मौके से फरार हो गए। दो पुरुष अमेरिकी नागरिक डैनियल और महाराष्ट्र के पंकज नहर से बाहर निकल आए, लेकिन ओडिशा के बिबाश डूब गए। शनिवार सुबह उनका शव बरामद किया गया। होमस्टे चलाने वाली महिला की शिकायत के आधार पर, गंगावती ग्रामीण पुलिस स्टेशन में भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस) की धारा 309(6) (चोरी या उगाही), 64 (बलात्कार), 70(1) (सामूहिक बलात्कार), 311 (लूट या डकैती के साथ गंभीर चोट या मृत्यु का इरादा), और 109 (हत्या का प्रयास) के तहत मामला दर्ज किया गया है।

सीरिया में फिर भड़की हिंसा: सरकार पर अचानक टूट पड़े असद समर्थक

अंधाधुंध गोलीबारी, 200 से ज्यादा की मौत

एजेंसी

बेरूत। सीरिया की नई सरकार समर्थित लड़ाकों ने बृहस्पतिवार और शुक्रवार को कई गांवों पर हमला किया जिसमें बड़ी संख्या में लोग मारे गए। ब्रिटेन के मानवाधिकार संगठन 'सीरियन ऑब्ज़र्वेटरी फॉर ह्यूमन राइट्स' ने यह जानकारी दी।मानवाधिकार संगठन के अनुसार ये हमले अपदस्थ राष्ट्रपति बशर अल-असद के समर्थकों द्वारा सरकारी सुरक्षा बलों पर किए गए हमलों के जवाब में किए गए। गांवों पर हमले बृहस्पतिवार को शुरू हुए और शुक्रवार को भी जारी

रहे। मानवाधिकार समूह के अनुसार हालिया झड़पें तब शुरू हुईं जब सरकारी बलों ने बृहस्पतिवार को तटीय शहर जबलेह के पास एक वांछित व्यक्ति को हिरासत में लेने की कोशिश की। इस दौरान असद के वफादारों ने उन पर घात लगाकर हमला कर दिया। 'सीरियन ऑब्ज़र्वेटरी फॉर ह्यूमन राइट्स' के अनुसार बृहस्पतिवार और शुक्रवार को नयी सरकार समर्थित लड़ाकों ने शीर, मुख्तारियेह और हफ़्फ़ा गांवों पर हमला किया जिसमें 69 पुरुषों की मौत हो गई, किसी महिला को कोई नुकसान नहीं पहुंचा। संगठन के प्रमुख रामी अब्दुर्रहमान ने कहा, '' उन्होंने सामने दिखाई देने वाले हर आदमी की हत्या कर दी। बेरूत के 'अल-मायदीन' टीवी ने भी अपनी एक खबर में तीन गांवों पर हमलों की जानकारी दी और कहा कि सिर्फ मुख्तारियेह गांव में हमले में 30 से अधिक पुरुष मारे गए। मानवाधिकार संगठन के अनुसार दो दिन में झड़पों में 200 से ज्यादा लोग मारे गए हैं। गांवों में बदले की भावना से किए गए हमलों में मारे गए लगभग 140 लोगों के अलावा, मृतकों में सीरिया के सरकारी बलों के कम से कम 50 सदस्य और असद के प्रति वफ़ादार 45 लड़ाके शामिल हैं। मार्च 2011 से सीरिया में जारी गृहयुद्ध में पांच लाख से ज़्यादा लोग मारे गए हैं और लाखों लोग विस्थापित हुए हैं। सीरिया के अधिकारियों ने हमले की बात को स्वीकार किया है लेकिन मृतकों की संख्या के बारे में कोई जानकारी नहीं दी। दिसंबर की शुरुआत में इस्लामी समूह हयात तहरीर अल-शाम के नेतृत्व वाले विद्रोही समूहों द्वारा असद की सरकार को गिराए जाने के बाद से दोनों पक्षों के बीच झड़पें जारी हैं।

कस्तूरबा आवासीय विद्यालय के निर्माण से छात्राओं को होगा फायद- सुशील सिंह

शकुन टाइम्स संवाददाता

धानापुर। एवती गांव में कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय का भवन निर्माण को लेकर शनिवार को शिलान्यास कार्यक्रम का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि सैयदराजा विधायक सुशील सिंह व विशिष्ट अतिथि पूर्व जिपंस सुशील सिंह जनौली ने संयुक्त रूप से फीता काटकर शिलान्यास किया।

इसके लिए शासन से साढ़े चार करोड़ रुपए स्वीकृत हो चुका है। सैयदराजा विधायक सुशील सिंह ने कहा कि एवती गांव में कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय बनने से क्षेत्र के बालिकाओं को शिक्षा के लिए काफी अच्छा प्लेटफार्म मिल जाएगा। सैयदराजा विधानसभा में बरहनी व धानापुर में काफी पहले

कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय का संचालन हो रहा है। इसके बावजूद कमालपुर से लगायत महुजी तक के बालिकाओं को शिक्षा के लिए काफी परेशानी होती थी। इसके लिए एवती गांव में कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय का निर्माण कराया जा रहा है। इससे अब गरीब परिवार के बालिकाओं को शिक्षा से वंचित नहीं होना पड़ेगा। विशिष्ट अतिथि पूर्व जिपंस सुशील सिंह जनौली ने कहा कि कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय निकट भविष्य में मिल का पत्थर साबित होगा। विद्यालय भवन के निर्माण से गरीब बालिकाओं को शिक्षा लेने में काफी आसानी हो जाएगी। इस मौके पर अवर अभियंता अरविंद कुमार, मंडल अध्यक्ष चंद्रभान मौर्य, उमाशंकर सिंह, संतोष सिंह, मुकेश यादव, आनंद सिंह, अजीत पांडेय,रामजी तिवारी, गगन सिंह, बाचा पाल, प्रदीप सिंह मुन्ना, गामा बिंद,रामकेर, रामाश्रय,अनिल श्रीवास्तव, रिपुसुदन पांडेय, अशोक सिंह, श्यामसुंदर सिंह,बिनोद सिंह आदि रहे।अध्यक्षता नंदकुमार पांडेय व संचालन श्रीराम चौबे ने किया।

साइबर क्राइम की छात्र व छात्राओं को दी गई जानकारी

शकुन टाइम्स संवाददाता

ईंटो (जालौन)। पुलिस अधीक्षक जालौन के आदेशानुसार क्षेत्राधिकारी माधौगढ़ के निर्देशानुसार लोगों को साइबर ठगी से बचाने के लिए गोहन थाना की ईंटो चौकी इंचार्ज रामवीर सिंह ने ग्राम ईंटो स्थित मां नारायणी यूनिवर्सल एजुकेशन स्कूल में छात्र छात्राओं को साइबर फाड से सावधान रहने व बचाव की जानकारी दी! उन्होंने बताया कि अनजाने फोन काल से दिए जाने वाले लुभावने वादों में न फंसे और अंजान मैसेज व लिंक पर क्लिक न करें एक छोटी सी चूक में आपका बैंक खाता खाली हो सकता है ऐसे फाड लोगों से बचे लकी ड्रा, लाटरी, आवास, लोन आदि के

♦ मां नारायणी यूनिवर्सल एजुकेशन एकेडमी में साइबर फाड की दी जानकारी!

लिए आने वाले फर्जी काल से सावधान रहें उनसे बात ही मत करे लालच में न आए किसी भी साइट पर क्लिक न करें अपना आधार कार्ड व ओटीपी किसी के साथ शेयर न करें यदि आपके साथ कभी कोई साइबर फाड होता है तो तत्काल पुलिस को सूचित करें इस मौके पर चौकी इंचार्ज रामवीर सिंह कास्टेबल रवि सोनू यादव एवं स्कूल स्टाफ से नीलकमल पंकज राहुल निरंजन आमिर शनि उपेन्द्र सौरभ दीपक मयंक रामू बीपी राम सहित महिला स्टाफ एवं छात्र छात्राएं मौजूद रहे!

संक्षिप्त सामाचार

अधिकारियों ने किया निरीक्षण पुराने जगह पर नहीं होगा होलिका दहन

जमानियां। आगामी होली त्योहार को देखते हुए प्रशासनिक अधिकारियों ने ग्राम सभा मुहम्मदपुर में होलिका दहन स्थल को लेकर शनिवार को ग्राम सचिवालय में बैठक आयोजित की। बैठक में होलिका दहन स्थल की सुरक्षा को लेकर चर्चा की गई, जिसमें अधिकारियों ने आगजनी की संभावनाओं और सुरक्षा पहलुओं पर विचार-विमर्श किया। बैठक के बाद उपजिलाधिकारी अभिषेक कुमार, क्षेत्राधिकारी राम कृष्ण तिवारी और थाना प्रभारी प्रमोद कुमार सिंह आदि ने मौके पर पहुंचकर होलिका दहन स्थल का निरीक्षण किया। वर्तमान स्थान घनी आबादी के बीच होने के कारण अधिकारियों ने वहां होलिका दहन की अनुमति न देने का स्पष्ट निर्देश दिया।

अधिकारियों ने ग्राम प्रधान प्रतिनिधि अनिल यादव, क्षेत्रीय लेखपाल और ग्रामीणों की मौजूदगी में आबादी से बाहर खंडहर सरकारी भवन के सामने स्थित ग्राम सभा की जमीन को नए होलिका दहन स्थल के रूप में चिन्हित किया। अधिकारियों ने ग्राम प्रधान को नए स्थान को समतल और स्वच्छ कराने के निर्देश दिए, जिसे ग्राम प्रधान ने सहमति के साथ स्वीकार किया और आदेश का अक्षरश: पालन करने का आश्वासन दिया ।ग्रामीणों ने प्रशासन के इस फैसले का स्वागत किया और सुरक्षित वातावरण में होलिका दहन की तैयारी को लेकर संतोष जताया। इस अवसर पर अंगद यादव, हरिशंकर पांडेय, परमानंद सिंह, रामाशीष सिंह, अरुण राम, अमित यादव, बिट्टू यादव, मदन सिंह सहित अन्य ग्रामीण उपस्थित रहे।

मान्यता मिलने पर हर्ष, प्रवेश प्रारम्भ

चहनियां। माँ खण्डवारी विधि महाविद्यालय सुरतापुर में बी.ए.एल.एल.बी. पाँच वर्षीय कोर्स की मान्यता सत्र 2025 से मिलने पर विद्यालय परिवार और अभिभावकों ने हर्ष व्याप्त किया । यह जानकारी देते हुए संस्था के निदेशक डॉ. आशुतोष कुमार सिंह ने बताया कि सत्र 2025 के लिए बी.ए.एल.एल.बी. 5 वर्षीय और एल.एल.बी. 3 वर्षीय के लिए प्रवेश प्रक्रिया प्रारंभ कर दी गई है।

मौक़े पर सच्चिदानन्द सिंह, मिथिलेश पाण्डेय, सुशील पाण्डेय, डॉ अश्विनी श्रीवास्तव, डॉ नवनीत तिवारी, डॉ अजय सिंह छेदी, डॉ श्याम नारायण सिंह, आदित्य सिंह, सुजीत सिंह, मो. ईस्लामुद्दीन, अभिषेक सिंह, राहुल यादव, सन्तोष सिंह आदि लोग उपस्थित रहे ।

जानलेवा हमला करने के मामले मे वांछित आरोपी गिरफ्तार

वाराणसी। थाना चौबेपुर पुलिस टीम द्वारा ऑपरेशन चक्रव्यूह के तहत मुखबिर की सूचना पर जानलेवा हमला करने व एससी/एसटी एक्ट से सम्बन्धित वांछित अभियुक्त मोहम्मद फिरोज पुत्र निजामुद्दीन ग्राम मुनारी थाना चौबेपुर को हडियाडीह गेट के पास रोड से गिरफ्तार कर अग्रिम विधिक कार्यवाही की गई। गिरफ्तार करने वाली पुलिस प्रभारी निरीक्षक जगदीश कुशवाहा थाना चौबेपुर,का0 रोहित मौर्या,का0 प्रमोद कुमार,हो0गा0 पीसी राजकुमार दुबे टीम रही।

पास्को एक्ट से संबंधित अभियुक्त गिरफ्तार, अपहृता बरामद

शकुन टाइम्स संवाददाता

वाराणसी। सहायक पुलिस आयुक्त सारनाथ के कुशल नेतृत्व में थाना चौबेपुर पुलिस टीम द्वारा ऑपरेशन चक्रव्यूह के तहत धारा 137(2),87,65(1) बीएनएस व 5(ठ)/6 पाक्सो एक्ट से सम्बन्धित वांछित अभियुक्त शहबान अली पुत्र खचाहे अली निवासी डुढुवा थाना चौबेपुर को थाना परिसर से गिरफ्तार करते हुए अपहृता की बरामदगी कर विधिक कार्यवाही की गई। गिरफ्तार करने वाली पुलिस प्रभारी निरीक्षक जगदीश कुशवाहा थाना चौबेपुर, उ.नि. प्रभाकर सिंह रहे।

पुलिस लाईन में दंगा एवं बल्वा ड्रिल का अभ्यास कराया गया अपर पुलिस अधीक्षक

उरई (जालौन)। आगामी त्यौहार/पर्व होली, माह रमजान आदि को दृष्टिगत जनपद में शान्ति व्यवस्था बनाये रखने तथा किसी भी आकस्मिक परिस्थिति में दंगा एवं बल्वा आदि से निपटने तथा नियंत्रण हेतु अपर पुलिस अधीक्षक जालौन प्रदीप कुमार एवं क्षेत्राधिकारी नगरअर्चना सिंह, क्षेत्राधिकारी जालौन की उपस्थिति में पुलिस लाईन उरई में दंगा नियन्त्रण उपकरणों से सुसज्जित होकर बलवा ड्रिल का अभ्यास किया गया है। बलवा ड्रिल के अभ्यास के दौरान पुलिसकर्मियों में से ही बल्वाई बने लोगों (भीड़) को तितर बितर करने हेतु बलवा ड्रिल के अंतर्गत कार्यवाही करवायी गयी तथा पुलिसकर्मियों को दंगा नियंत्रण उपकरण में जैसे रबर बुलेट गन, लाठी चार्ज, आंसू गैस के गोले, एंटी राइट गन, टीयर गैस गन, टीयर स्मोक सेल, हैंड ग्रेनेड आदि शस्त्रों के सम्बन्ध मे जानकारी भी दी गयी एवं बल्वा ड्रिल का डिमॉस्ट्रेशन भी कराया गया।

एक दिन की बीएसए बनीं दीपिका विश्वकर्मा

शकुन टाइम्स संवाददाता

जौनपुर। कल दिनांक 8 मार्च 2025 को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर बेसिक शिक्षा अधिकारी कार्यालय में दीपिका विश्वकर्मा कक्षा-5, कम्पोजिट विद्यालय तारा(उमरी) मुफ्तीगंज को एक दिन के लिऐ जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी बनाया गया। यह दिवस विशेष कर महिलाओं के प्रति सम्मान,प्रशंसा व प्रेम प्रकट करते हुए,महिलाओं के आर्थिक,राजनीतिक और सामाजिक उपलब्धियों एवं कठिनाइयों की सापेक्षता के उपलक्ष्य में उत्सव के रूप में मनाया जाता है। बीएसए डॉ गोरखनाथ पटेल ने छात्रा को एक दिन के लिए बीएसए बनने पर शुभकामनाएं दी। कंपोजिट विद्यालय तारा उमरी की छात्रा दीपिका विश्वकर्मा ने बेसिक शिक्षा अधिकारी बनकर विभागीय कर्मचारियों को दिशा-निर्देश दिया। दीपिका विश्वकर्मा ने कार्यों की समीक्षा कीऔर जानकारी प्राप्त की। दीपिका ने अपने प्रभावी प्रस्तुति से सभी का मन मोह लिया। ज़लाधिकारी दिनेश चंद्र छात्रा की प्रतिभा से मंत्र मुग्ध हुए और छात्रा के लिए 11000 धनराशि फिक्स करने की बात कही जिसका प्रयोग वह18 वर्ष पूर्ण होने पर कर सकेगी। बेसिक शिक्षा अधिकारी डॉ गोरखनाथ पटेल ने दीपिका को इनाम स्वरूप 5100 रुपए की धनराशि प्रदान की। दीपिका विश्वकर्मा ने सभी को महिला दिवस की शुभकामनाएं दी और कहा कि वह भविष्य में पढ़ लिख कर अपने माता पिता का नाम रौशन करना चाहती हैं। उसने कहा कि आज बेसिक शिक्षा अधिकारी की कुर्सी पर बैठकर मुझे बहुत ही गर्व महसूस हो रहा है। मैं सभी बहनों से अपेक्षा करती हूं कि वह भी पढ़ लिखकर अच्छे पदों पर आसीन होकर समाज, देश व महिलाओं और बच्चों की सेवा करें, जिससे हमारा देश आत्मनिर्भर बन सकें।

बेसिक शिक्षा विभाग जौनपुर द्वारा अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर विशेष आयोजन

शकुन टाइम्स संवाददाता

जौनपुर। बेसिक शिक्षा विभाग जौनपुर द्वारा आयोजित अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस कार्यक्रम का आयोजन आज दिनांक 08 मार्च 2025 को डायट, जौनपुर के सभागार में आयोजित किया गया। कार्यक्रम की मुख्य अतिथि सुश्री इशिता किशोर- ज्वाइंट मजिस्ट्रेट जौनपुर ,विशिष्ट अतिथि उपजिलाधिकारी निधि शुक्ला तथा दिव्या शुक्ला, जिला दिव्यांगजन कल्याण अधिकारी,अनिता-जिला अल्पसंख्यक कल्याण अधिकारी द्वारा मॉ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण व दीप प्रज्ज्वलन कर शुभारम्भ किया गया। कार्यक्रम के आयोजक डॉ0 गोरखनाथ पटेल, जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी द्वारा पुष्प गुच्छ देकर तथा सभी अतिथियों का बैज अलंकरण कर स्वागत किया गया। अतिथियों के स्वागत में कस्तूरबा गॉधी की छात्राओं द्वारा बालिका शिक्षा से संबंधित मनमोहक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। उपजिलाधिकारी निधि शुक्ला ने महिला सशक्तिकरण के विभिन्न चरणों के बारे में विस्तार से बताया। ज्वाइंट मजिस्ट्रेट सुश्री इशिता किशोर ने बालिकाओं को आत्मविश्वास को बढ़ाने के लिए अभिप्रेरित किया, बेटियों को अधिक अवसर दिया जाए, इमोशनल इंटेलिजेंस पर अधिक ध्यान दिया जाए, निर्णय लेने में फाइनेंशियल पर अधिक ध्यान देने, महिला व बालिकाओं की सुरक्षा संरक्षा पर ध्यान देने तथा बेटी पढ़ाओ-बेटी बचाओ और बेटियों को जिंदगी में बड़ा लक्ष्य रखने के लिए समझाते हुए खुद पर भरोसा रखने की बात कही। जिला अल्पसंख्यक अधिकारी अनीता ने सभी से अपील किया कि बालिका शिक्षा को अधिक बढ़ावा दिया जाय। जिला दिव्यांग अधिकारी दिव्या शुक्ला ने दहेज के प्रति जागरूक किया।

दहेज रहित विवाह पर बल दिए जाने तथा दूसरों के लिए प्रेरणा बढ़ाने पर जोर दिया। वित्त एवं लेखाधिकारी श्री राजीव पाण्डेय ने महिला दिवस के अवसर पर प्राचीन कल्पनाओं के साथ महान देवियों के बारे में जिक्र किया तथा बाल विवाह रोकने पर पूर्णत: बल दिया।

बालिका सुरक्षा व सरंक्षा के बारे में अधिक ध्यान देने की अपील किया। कार्यक्रम के आयोजक जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी डॉ0 गोरखनाथ पटेल ने सभी के प्रति आभार व्यक्त किया।

कोतवाली परिसर में हुआ संपूर्ण समाधान दिवस का आयोजन

शकुन टाइम्स संवाददाता

सकलडीहा। सकलडीहा कोतवाली परिसर में कोतवाल हरिनारायण पटेल की अध्यक्षता में समाधान दिवस का आयोजन किया गया। जहां होली का त्यौहार नजदीक होने तथा रमजान माह प्रारंभ होने के कारण सुबह से ही समाधान दिवस की तैयारी पूर्ण कर ली गई थी। जहां परिसर में अधिकारियों के बैठने तथा फरियादियों को बैठने के लिए कुर्सियों की उत्तम व्यवस्था की गई थी। वही सुबह से लेकर समाधान दिवस अवधि तक कई फरियादियों द्वारा अपनी फरियाद अधिकारियों को समक्ष रखी गई।

वही तहसील परिसर से राजस्व मामले के निस्तारण को लेकर तहसीलदार द्वारा उपस्थिति दर्ज कराई गई थी। जिनके सम्मुख राजस्व कार्यों का कार्यभार की देखरेख करने वाले लेखपाल भी उपस्थितथे। वही एक मामले को लेकर फरियादी द्वारा बताया गया कि दबंगों द्वारा उन्हें मारपीट कर घायल कर दिया गया है। जिसके संबंध में कई बार प्रार्थना पत्र भी दी गई है, परंतु कोई भी ठोस कार्यवाही नहीं होने के कारण उक्त दबंग के हौसले बुलंद है। इस संपूर्ण समाधान दिवस में सकलडीहा कोतवाल हरि नारायण पटेल, तहसीलदार, शिवकुमार यादव, बंटी सिंह, नई बाजार चौकी इंचार्ज विजय राज सिंह के साथ राजस्व कर्मी व ग्रामीण उपस्थित रहे।

कोकाकोला के 4.5 लाख के माल की चोरी का खुलासा,ड्राइवर ने माल गायब किया

गोण्डा। अयोध्या से गोंडा जा रहे कोका कोला के माल से भरे डीसीएम की चोरी का मामला पुलिस ने सुलझा लिया है। पुलिस ने चोरी का माल और आरोपी ड्राइवर को गिरफ्तार कर लिया है। मामले में पीड़ित मंशाराम ने कोतवाली मनकापुर में शिकायत दर्ज कराई थी। उन्होंने बताया कि उनका डीसीएम अयोध्या की कोका कोला कंपनी से डिस्ट्रीब्यूटर तक माल पहुंचाने का काम करता है। 23 फरवरी को ड्राइवर वीरेन्द्र कुमार पांडेय करीब 5 लाख रुपये का माल लेकर अयोध्या से गोंडा के लिए निकला था। गाड़ी गंतव्य तक नहीं पहुंची और माल समेत गायब हो गई। अगले दिन गाड़ी मनकापुर-उतरौला मार्ग पर नवोदय विद्यालय के पास खाली मिली। पुलिस ने 3 मार्च को मामला दर्ज कर जांच शुरू की। मुखबिर की सूचना पर पुलिस ने शनिवार को ग्राम मऊ के मजरे बरदही से चोरी का माल बरामद किया। साथ ही आरोपी ड्राइवर वीरेन्द्र पांडेय को भी गिरफ्तार कर लिया।

नारी का सम्मान ही समाज की वास्तविक प्रगति है - लल्लन तिवारी

शकुन टाइम्स संवाददाता

चहनियाँ। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर शनिवार को देश के प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थान राहुल एजुकेशन के चेयरमैन लल्लन तिवारी ने राहुल एजुकेशन की एचआर मैनेजर आरती पांडेय और राहुल बीएड कॉलेज की प्रिंसिपल अंजलि सुर्वे का सम्मान करते हुए कहा कि आज समाज के हर क्षेत्रों में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही हैं।महिला शिक्षा, कार्यस्थल पर समानता, स्वास्थ्य, और सुरक्षा इसके अलावा, घरेलू हिंसा, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव और उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाने जैसे मुद्दों पर भी चर्चा किया गया।महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और उनकी स्थिति सुधारने के लिए कई वैश्विक संगठनों द्वारा अभियान चलाए जाते हैं। महिला दिवस का उद्देश्य महिलाओं के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक योगदान को पहचानना और उनके अधिकारों की रक्षा करना है। इसलिए महिला दिवस उत्सव के तौर पर मनाया जाता है। साथ ही उन्हें यह ऐहसास कराया जाता है कि वह हमारे लिए कितनी खास हैं। महिला दिवस पर उन स्त्रियों के साहस को सम्मानित करना चाहिए, जो हमारे इर्द-गिर्द रहती हैं और अपने-अपने तरीके से रोजाना संघर्ष करके स्थितियां बदल रही हैं। यह दिन महिलाओं के साथ समानता और उनके अधिकारों के लिए संघर्ष की याद दिलाता है।

डीएम ने सड़क मार्ग के निर्माण की देखी प्रगति, बाधाओं को दूर करने के निर्देश

शकुन टाइम्स संवाददाता

लखीमपुर खीरी। डीएम दुर्गा शक्ति नागपाल ने एसपी संकल्प शर्मा के साथ जिला मुख्यालय पर जनहित को सुगम यातायात प्रदान किए जाने के उद्देश्य से निर्माणाधीन एलआरपी से इंदिरा मनोरंजन मार्ग तक सड़क मार्ग के सुदृढ़ीकरण और चौड़ीकरण कार्य की प्रगति देखी। निरीक्षण के दौरान डीएम ने अधिशासी अभियंता, विद्युत वितरण खंड प्रथम शैलेंद्र कुमार को इस मार्ग पर विद्युत पोल और ट्रांसफार्मर की शिफ्टिंग में आ रही बाधाओं को दूर करते हुए शीघ्र शिफ्टिंग के निर्देश दिए।

डीएम ने अधिशासी अभियंता से शिफ्टिंग में विलंब का कारण जाना। इसपर ईई ने अवगत कराया कि पोल शिफ्टिंग की धनराशि प्राप्त हो गई है। वर्तमान में स्टोर में पोल की शॉर्टेज है। इस पर डीएम ने पोल की उपलब्धता के संबंध में उच्च अधिकारियों से समन्वय स्थापित करने और उनके स्तर से भी पत्र भिजवाने की बात कही। इसके बाद डीएम दुर्गा शक्ति नागपाल और एसपी संकल्प शर्मा ने आगामी त्योहारों के दृष्टिगत शहर की व्यस्ततम एवं लाइफ लाइन कहे जाने वाले संकटा देवी-सदर चौराहा (श्रीराम चौराहा) मार्ग पर यातायात की सुगमता के लिए पैदल भ्रमण किया। सड़क मार्ग पर अवैध अतिक्रमण एवं बेतरतीब खड़े वाहनों पर नाराजगी जताई। निर्देश दिए कि सड़क पर अतिक्रमण करने वालों पर कड़ी कार्यवाही की जाए। वही दुकान के आगे सड़क मार्ग पर वाहन पार्क करने वालों का चालन किया जाए।

डीएम-एसपी ने पुलिस क्षेत्राधिकारी (यातायात) रमेश कुमार तिवारी, शहर कोतवाल हेमंत राय, यातायात निरीक्षक संग यातायात प्रबंधन के संबंध में चर्चा करते हुए सुगम यातायात व्यवस्था बनाए जाने हेतु जरूरी दिशा निर्देश दिए। शहर के व्यस्ततम सड़क मार्गों पर व्यवस्थित एवं सुरक्षित यातायात व्यवस्था के परिचालन के संबंध में सभी जरूरी कदम उठाने के निर्देश दिए।

जिलाधिकारी खीरी व पुलिस अधीक्षक खीरी की अध्यक्षता में थाना समाधान दिवस का किया गया आयोजन

लखीमपुर खीरी। जिलाधिकारी खीरी और पुलिस अधीक्षक खीरी की अध्यक्षता में थाना समाधान दिवस का आयोजन किया गया। इस दौरान, जिलाधिकारी दुर्गा शक्ति नागपाल और पुलिस अधीक्षक संकल्प शर्मा ने थाना फरधान पर फरियादियों की समस्याओं को सुना और राजस्व और पुलिस विभाग के अधिकारियों को टीम बनाकर मौके पर जाकर शिकायतों का निस्तारण करने के निर्देश दिए। पुलिस अधीक्षक ने पुलिस कर्मियों को निर्देशित किया कि थाना समाधान दिवस में प्राप्त शिकायती प्रार्थना पत्रों का गुणवत्तापूर्ण निस्तारण जल्द से जल्द किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि जिन प्रार्थना पत्रों का निस्तारण उच्चाधिकारी स्तर से किया जाना है, उन पर रिपोर्ट लगाकर संबंधित अधिकारी को प्रेषित किया जाना चाहिए ताकि समय से उचित निस्तारण कराया जा सके। इसके अलावा, जनपद के समस्त क्षेत्राधिकारीगण ने अपने-अपने सर्किल के थानों पर उपस्थित रहकर जनशिकायतों का निस्तारण कराया। यह आयोजन जनपद के प्रत्येक थाना स्तर पर किया गया था।

मातृशक्ति समर्पण और जज्बे के साथ नए प्रतिमान गढ़ रही हैः धर्मेंद्र सिंह

शकुन टाइम्स संवाददाता

महाराजगंज। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर भारतीय जनता पार्टी कार्यालय पर जिलाध्यक्ष संजय पांडेय की अध्यक्षता में महिला मोर्चा के तत्वाधान में महिला दिवस का आयोजन किया गया। पंडित दीन दयाल उपाध्याय डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी के चित्र पर पुष्प अर्पित कर मुख्य अतिथि प्रदेश उपाध्यक्ष विधान परिषद सदस्य डॉ धर्मेंद्र सिंह,जिले के प्रभारी राम जियावन मौर्य, पनियरा विधायक ज्ञानेंद्र सिंह सदर विधायक जय मंगल कन्नौजिया विधायक ऋषि त्रिपाठी ने कार्यक्रम की शुरुआत की। मुख्य अतिथि प्रदेश उपाध्यक्ष विधान परिषद सदस्य डॉ धर्मेंद्र सिंह ने कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कहा कि दुनिया भर में आज महिला दिवस मनाया जा रहा है। हर साल

महिलाओं के अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने और समाज में उन्हें सामान्य का अधिकार दिलाने के मकसद से यह दिन 8 मार्च को मनाया जाता है। यह दिन उनकी मेहनत, समर्पण, संघर्ष और सम्मान का प्रतीक है। एक महिला अपने जीवन में कई सारे उतार-चढ़ावों से गुजरना पड़ता है। बावजूद इसके हर मुश्किलों को पार कर वह अपनी सभी जिम्मेदारियां को बखूबी निभाती हैं। उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर सभी मातृशक्ति माता एवं बहनों को बधाई एवं शुभकामनाएं देते हुए, कहा मातृशक्ति आज समर्पण और जज्बे के साथ सेवा के नये प्रतिमान गढ़ रही है। देश की ताकत एवं समाज की शक्ति हैं आज मातृशक्ति, आज हमारी माताएं और बहनें धर परिवार, खेल, व्यापार, शिक्षा, अंतरिक्ष एवं हर क्षेत्र में पूरी लगन और मेहनत से सफलता के शिखर तक पहुंची है।

इस अवसर पर अधिवक्ता वंदना तिवारी, फरीदा इरम , रमाकांति त्रिपाठी ,जिला महामंत्री ओम प्रकाश पटेल बबलू यादव, शुभ्रा सिंह, जिला मंत्री गौतम तिवारी सहित तमाम महिलाएं मौजूद रही।

सेवानिवृत्त शिक्षक मुरलीधर यादव का हुआ निधन

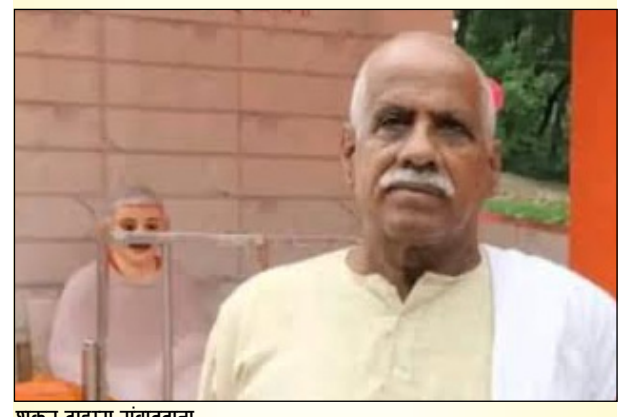

शकुन टाइम्स संवाददाता

कैंम्पियरगंज/गोरखपुर। क्षेत्र के मोहनाग गांव निवासी सेवानिवृत्त शिक्षक मुरलीधर यादव का हृदय गति रुकने के कारण शुक्रवार को निधन हो गया उनका अंतिम संस्कार रोहिन नदी के मोहनाग घाट पर किया गया उनके छोटे पुत्र विरेन्द्र यादव ने मुखाग्नि दिया।निधन पर सपा के वरिष्ठ नेता ई ?सुरेन्द्र नाथ यादव,ग्राम प्रधान प्रतिनिधि छेदी जयसवाल, अजय सिंह सैथवार,धर्मनाथ यादव, गुड्डू यादव,राहूल सिंह, दुर्गेश सहानी, श्यामनाथ यादव,मन्टू यादव, अमरेन्द्र यादव, सुरेन्द्र सहानी,अब्दूल वहाब अंसारी ,राम उजागिर यादव,रामभवन गौड़, धर्मेन्द्र गौड़ ,दीपू जयसवाल, दुर्बल यादव,अनिल यादव, रामपाल जयसवाल, शैलेन्द्र यादव आदि लोगो ने शोक जताया।

संक्षिप्त सामाचार

दुकानदार लगाएं ग्रो सेफ फूड अभियान का पोस्टर

कुशीनगर। जिला कृषि रक्षा अधिकारी ने ग्रो सेफ फूड अभियान के अन्तर्गत जनपद के सभी कृषि रक्षा रसायन विक्रेताओं के प्रतिष्ठान पर अभियान का पोस्टर लगाने के निर्देश दिए हैं। उन्होंने कहा है कि पोस्टर का वितरण किया जा रहा है। पोस्टर पर सही रसायन, छिड़काव हेतु मात्रा, रसायन के प्रयोग से होने वाले हानि से सम्बन्धित हेतु सुझाव, नकली मिलावटी एवं घटिया रसायन से सम्बन्धित जानकारियां दी गयी हैं। रसायन विक्रेता अपने प्रतिष्ठान पर अभियान के पोस्टर जरूर चस्पा कर लें। ताकि कृषकों को अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त हो सके।

हादसे में चालक की मौत मामले में केस दर्ज

गोरखपुर। चौरीचौरा थाना क्षेत्र के भाऊपुर में पांच मार्च को बाइक की चपेट में आने से बस चालक की मौत हो गई थी। इस मामले में पुलिस ने बेटे की तहरीर पर अज्ञात बाइक चालक पर केस दर्ज कर लिया है। झंगहा थाना क्षेत्र के राजधानी टोला भगतान निवासी दुर्गा प्रसाद मिश्रा ने चौरीचौरा पुलिस को प्रार्थना पत्र देकर कहा कि मेरे पिता भरत कुमार मिश्रा (60) एक स्कूल की बस चलाते थे। वह बंजारी देवी स्थान पर चाय पीने जा रहे थे, तभी बाइक सवार ने उन्हें ठोकर मार दी थी।

गारमेंट्स की दुकान में लगी आग, लाखों का नुकसान

फखरपुर/बहराइच। बहराइच जिले के वजीरगंज बाजार में स्थित गारमेंट्स की दुकान में देर रात को अज्ञात कारणों से आग लग गई। जिससे दुकान में रखा सारा सामान जल गया। दुकान मालिक के मुताबिक 20 लाख से अधिक का नुकसान हुआ है। फखरपुर थाना क्षेत्र के वजीरगंज बाजार में मेराज अंसारी की कपड़े की दुकान है। जिसमें वह रेडिमेड कपड़े की थोक और फुटकर बिक्री करते हैं। शुक्रवार रात को अज्ञात कारणों से दुकान में धुंआ निकलता आसपास के लोगों ने देखा। जिस पर सूचना दुकान मालिक मेराज अंसारी को दी। मौके पर पहुंचे दुकान मालिक ने दुकान का ताला खोला तो अंदर सारा सामान जल चुका था। आसपास के लोगों ने आग बुझाया। दुकान मालिक ने बताया कि शुक्रवार को ही वह होली और ईद पर्व में बिक्री के लिए सात लाख रूपये का कपड़ा लेकर आए थे, वह भी जल गया। लगभग 20 लाख से अधिक की संपति का नुकसान हुआ है। उन्होंने बताया कि त्यौहार को देखते हुए लोगों से उधार लेकर समान लाए थे। दुकान मालिक ने तहसील के साथ पुलिस को आग लगने की सूचना दी है। क्षेत्र के लोग शॉर्ट सर्किट से आग लगने की संभावना जता रहे हैं।

गोवध में वांछित अभियुक्त से पुलिस की मुठभेड़, पैर में लगी गोली

बहराइच। यूपी के बहराइच जिले के परसोहर गांव में हुई गोकशी के मामले में वांछित अभियुक्त शुक्रवार रात को बाइक से जा रहा था। पुलिस टीम के घेरने पर बदमाश ने फायरिंग की। जवाबी कार्रवाई में बदमाश घायल हो गया। उसे सीएचसी से जिला अस्पताल रेफर कर दिया गया है। जानकारी के मुताबिक जरवल रोड थाना क्षेत्र में शनिवार की सुबह करीब चार बजे जरवल कस्बा हरचंदा मार्ग पर बसहिया जगत गांव के करीब एसओजी व जरवल रोड थाने की संयुक्त पुलिस टीम के साथ गौकशी के आरोपी से मुठभेड़ हो गई है। जिसमें पुलिस की जवाबी कार्रवाई में गौकशी का आरोपी घायल हो गया।

कंपोजिट विद्यालय गुर्चिहा में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया

शकुन टाइम्स संवाददाता

बृजमनगंज,/ महाराजगंज। बृजमनगंज विकासखंड के कंपोजिट विद्यालय गुर्चिहा में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस को बड़े ही हर्षोल्लास के साथ विद्यालय के बच्चों एवं विद्यालय स्टॉफ के द्वारा मनाया गया। इस अवसर पर विद्यालय में भाषण एवं चार्ट पेपर प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। विद्यालय के शिक्षक डा0 रमेश कुमार यादव द्वारा मातृशक्ति स्वरूपा छात्राओं द्वारा बोगनबेलिया के पौधे का रोपण कराया गया एवं सभी छात्राओं को कलम देकर कलम को भविष्य बनाने की बात कही गयी साथ ही डा0 रमेश कुमार यादव द्वारा मातृ-शक्तियों पर स्वरचित काव्य पाठ %नारी वही कहाती है% भी प्रस्तुत किया गया एवं विद्यालय की बहनों को आशीर्वचन भी दिया गया। विद्यालय के शिक्षिकों बासदेव प्रसाद, चंद्र प्रकाश सहित समस्त विद्यालय स्टाफ एवं छात्रों मुकेश, आदित्य, पंकज, आशीष, संजय, प्रिंस आदि ने विद्यालय के बहनों को महिला दिवस की शुभकामनाएं दी गयी।

नारीशक्ति विकसित भारत की सबसे बड़ी गारंटीः सतीश द्विवेदी

शकुन टाइम्स संवाददाता

गोरखपुर। अतंर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर भाजपा क्षेत्रीय कार्यालय (रानीडीहा) पर आयोजित महिला सम्मेलन सम्मान समारोह में मुख्य अतिथि/वक्ता के रूप में सतीश द्विवेदी जी (पूर्व मंत्री उत्तर प्रदेश सरकार) ने कहा कि जब से केंद्र में 2014 से मोदी सरकार राज्य में योगी सरकार बनी है तब से पीड़ित, शोषित बंचित, पीड़ित महिलाओं के उत्थान के लिए केंद्र और राज्य सरकार सदैव तत्पर रही है, 10 वर्षों में 15 करोड़ LPG गैस सिलेंडर बढाई गयी है,

जिससे प्रत्येक घरों में बेटी बहनों माताओं के लिये गैस सिलेंडर के माध्यम से उन्हें चूल्हे, आदि पर खाना बनाने से मुक्ति मिली इस तरह के दर्जनों योजना शुरू की गई है मुख्यमंत्री कन्या सुमंगला योजना शुरू की गई जिससे जन्म लेने वाली बेटी को 21 वर्ष के उम्र में उसे इतना धन मिल सके जिससे उसकी शादी विवाह हो सके। कार्यक्रम की अध्यक्षता युधिष्ठिर सिंह एवं संचालन हरिकेश राम त्रिपाठी ने किया। जिलाध्यक्ष युधिष्ठिर सिंह ने कहा कि स्वयं सहायता समूह के बारे में 2014 से पहले कोई जानता नही था ना ही मातृशक्ति इसकी लाभ ले पाती थी लेकिन जब से केंद्र में मोदी जी राज्य में योगी जी की सरकार आई स्वयं सहायता समूह के माध्यम से देश की मातृशक्ति को काफी मजबूती मिली। विधायक प्रदीप शुक्ला ने कहा कि देश की आधी आबादी, देश की सर्वांगीण विकास में जितना पुरुषों का योगदान है ठीक वैसे ही महिलाओं का योगदान है इसे ध्यान में रखते हुये हमारी सरकार ने महिलाओं के लिए आरक्षण लागू किया गया। उक्त अवसर पर महिलाओं को मुख्य अतिथि के द्वारा अंगवस्त्र भेंट कर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में सिद्धार्थनाथ पाण्डेय, चिरंजीवी चौरसिया जी, मनोज शुक्ला, छोटेलाल मौर्या, मंजू सिंह, इन्द्र कुमार निगम, वीना उपाध्याय, सूरज निगम, संजू सिंह, संदीप विश्वकर्मा, पूजा सिंह, दीप्ति उपाध्याय, सुमन सिंह, स्वेता सिंह, अनिता शर्मा, गीता तिवारी, आभा पाण्डेय, ज्योति अग्रवाल, अर्चना छापड़िया, अनुपमा शर्मा, अनिता सिंह, वैष्णवी अग्रवाल, पुष्पलता सिंह, मीनाक्षी राय, कंचन त्रिपाठी पुष्पा मिश्रा सहित बड़ी संख्या में मातृशक्ति उपस्थित रही।

कुशीनगर में बोर्ड परीक्षा में अनियमितता करने वाले दो लोगों के विरुद्ध मुकदमा दर्ज

शकुन टाइम्स संवाददाता

कुशीनगर। उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जिले के सोहसा इंटर कॉलेज से यूपी बोर्ड की अंग्रेजी परीक्षा की कॉपी गायब होने के मामले में आखिरकार शुक्रवार देर रात तक चली जद्दोजहद के बाद जिला विद्यालय निरीक्षक कुशीनगर श्रवण कुमार गुप्ता ने दो व्यक्तियों के विरुद्ध मुकदमा पंजीकृत करा दिया। जिला विद्यालय निरीक्षक ने सोहसा मठिया स्थित जनता इंटर कॉलेज के केंद्र व्यवस्थापक कपिलदेव गुप्ता और बोर्ड परीक्षा संकलन केंद्र प्रभारी व बुद्धा इंटर कॉलेज के प्रधानाचार्य उमेश उपाध्याय के विरुद्ध कसया थाने में शुक्रवार की रात में तहरीर देकर मुकदमा दर्ज कराया। जिला विद्यालय निरीक्षक ने थाने में दी गयी तहरीर में लिखा कि बुद्ध इण्टर

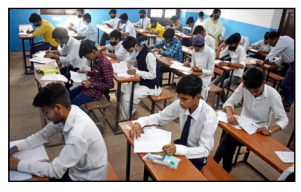

मीडिएट कालेज कुशीनगर के प्रधानाचार्य ने अपने पत्र द्वारा दिनांक 7 मार्च को अवगत कराया कि बोर्ड परीक्षा वर्ष 2025 में जि0वि0 निरीक्षक के पत्रांक परीक्षा 2025/7902-9/2024-25 के क्रम में यह विद्यालय उप संकलन केन्द्र है। जिसमें विकास खण्ड फाजिलनगर व कसया के परीक्षा केन्द्रो की कॉपी का बण्डल जमा होता है। दिनांक 7 मार्च 2025 को प्रात: हाईस्कूल अंग्रेजी विषय की परीक्षा थी। इस केन्द्र पर आवंटित सभी केन्द्रो के बण्डल दोपहर 2 बजे तक जमा हो चुके हैं। परन्तु जनता इण्टर कालेज सोहसा मठिया केन्द्र पर प्रात: काल में सम्पन्न हुई हाईस्कूल अंग्रेजी विषय का बण्डल संकलन केन्द्र को 7 बजे शाम तक प्राप्त नही हुआ है, बार-बार दूरभाष से सम्पर्क करने पर केन्द्र व्यवस्थापक के द्वारा कोई स्पष्ट उत्तर नही दिया गया। स्पष्ट है कि कपिलदेव प्रसाद केन्द्र व्यवस्थापक / प्रधानाचार्य जनता इण्टर कालेज सोहसा मठिया कुशीनगर द्वारा हाईस्कूल अंग्रेजी विषय की उत्तर.पुस्तिका संकलन केन्द्र पर जमा नही कराया गया है। जिसके लिए कपिलदेव प्रसाद केन्द्र व्यवस्थापक /प्रधानाचार्य जनता इण्टर कालेज सोहसा मठिया कुशीनगर पूर्ण रूपेण से दोषी है तथा उमेश उपाध्याय प्रधानाचार्य / उपनियन्त्रक उप संकलन केन्द्र बुद्ध इण्टरमीडिएट कालेज कुशीनगर द्वारा जिला विद्यालय निरीक्षक को हाईस्कूल अंग्रेजी विषय का बण्डल संकलन केन्द्र पर समय से न पँहुचने की सूचना काफी देर बाद दी गयी। जिससे यह स्पष्ट होता है कि उक्त प्रकरण में उमेश उपाध्याय प्रधानाचार्य/ उपनियन्त्रक उप संकलन केन्द्र बुद्ध इण्टर मीडिएट कालेज कुशीनगर द्वारा लापरवाही की गयी है। कपिलदेव प्रसाद केन्द्र व्यवस्थापक जनता इण्टर कालेज सोहसा मठिया कुशीनगर तथा उमेश उपाध्याय प्रधानाचार्य / संकलन केन्द्र बुद्ध इण्टर मीडिएट कॉलेज कुशीनगर द्वारा विभागीय कार्य मे अपने दायित्वो के प्रति उदासीनता, कर्तव्यो के प्रति घोर लापरवाही पर उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद की परीक्षा 2025 हेतु जारी गाईडलाईन एवं उत्तर प्रदेश सार्वजनिक परीक्षा (अनुचित साधनो का निवारण) अधिनियम 2024 का पालन नही किये जाने के दोषी है।

गौरतलब है कि उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा द्वारा यूपी बोर्ड की हाईस्कूल और इंटरमीडिएट की परीक्षा संचालित करायी जा रही है। इसी के अंतर्गत बीते शुक्रवार 7 मार्च को प्रात: पाली में अंग्रेजी विषय की हाईस्कूल की परीक्षा थी। सोहसा मठिया में स्थित जनता इंटर कॉलेज पर परीक्षा सम्पन्न होने के बाद अंग्रेजी विषय की उत्तर पुस्तिका ही गायब हो गयी और उसे संकलन केंद्र पर जमा नहीं कराया गया। इस मामले को पचाने के लिए जिला विद्यालय निरीक्षक कार्यालय पर देर रात तक माथापच्ची चली और आखिरकार जब मामला मीडिया में उछल गया तो हारकर जिविनि ने दो व्यक्तियों के खिलाफ कसया थाने में एफआईआर दर्ज करवा दिया।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर जायंट्स सहेली ने चौकी प्रभारी को किया सम्मानित

शकुन टाइम्स संवाददाता

औरैया (ब्यूरो)। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर जॉइंट सहेलियों ने महिला थाना तथा ककोर चौकी पहुंचकर चौकी प्रभारी को सम्मानित किया। संस्था अध्यक्षा ने दोनों एस आई सोनी रावत,आशा किरण को माला पहना कर सम्मानित किया,बाद में एक अच्छा सा उपहार भेट किया।बाद में सहेलियों ने गुलाल लगाकर होली मनाई।

इसके बाद पुलिस चौकी प्रभारी सोनी रावत ने कहा आज के दिन महिलाओं सम्मान मिलने से मुझे गर्व है कि मैं भी एक महिला हूं और आज महिलाओं के लिए अधिक से अधिक सहयोग कर रही हूं। एस आई आशा किरन महिला थाना जिला मुख्यालय में तैनात है।उन्होंने अपने बचपन की कहानी सुनाई इसमें 6 बहिनें होने के बाद भी अथक प्रयास करके पुलिस विभाग में सफलता पाई और इस सभी का श्रेय अपने मां-बाप को दिया जानकारी देते हुए बताया जहां नारी की पूजा होती वहां देवता निवास करते हैं जिस घर में नारी का सम्मान होता है वहां लक्ष्मी स्वयं आती है। घर की गृहिणी लक्ष्मी का ही रूप है घर में माता भी महिला होती है । महिला दिवस आज की नारी धरती से लेकर अंतरिक्ष तक अपना परचम लहरा चुकी है। आज की नारी हर क्षेत्र में अपना योगदान दे रही है महिलाओं को भी जीने के अधिकार के साथ सम्मान मिलना चाहिए।आज अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर पुलिस अधिकारियों का सम्मान किया गया इस अवसर पर आदेश पुष्प लता मेनका को अंजू गर्ग अध्यक्ष सपना गुप्ता पायल पोरवाल सुधा अग्रवाल ने सम्मानित किया।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर महिला सम्मेलन एवं सम्मान समारोह का हुआ आयोजन

शकुन टाइम्स संवाददाता

गोरखपुर। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर भारतीय जनता पार्टी महानगर महिला मोर्चा की कार्यकताओं ने महानगर अध्यक्ष महिला मोर्चा श्वेता श्रीवास्तव के नेतृत्व मेंआज महिला सम्मेलन एवं सम्मान समारोह कार्यक्रम बेनीगंज स्थित भाजपा कार्यालय पर कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में ग्रामीण विकास राज्य मंत्री भारत सरकार कमलेश पासवान व विशिष्ट अतिथि महापौर डॉ मंगलेश श्रीवास्तव एवं महानगर अध्यक्ष राजेश गुप्ता उपस्थित रहे।

मुख्य अतिथि ने कहा कि सशक्त नारी विकसित भारत, सुसंस्कृत समाज व सशक्त राष्ट्र को आकार देने में अद्वितीय योगदान दे रही नारी शक्ति को नमन । मोदी सरकार ने हमेशा नारी शक्ति का सम्मान किया है।नय भारत के निमार्ण में अग्रणी भूमिका। आज मोदी सरकार में

महिलाएं अपनी प्रतिभा के बल पर प्रत्येक क्षेत्र में नए आयाम स्थापित कर रही हैं। लखपति दीदी योजना, बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ योजना, प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, सुकन्या समृद्धि योजना से सुरक्षित हो रहा बालिकाओं का भविष्य, उज्ज्वला योजना ने धुएं से दिलाए मुक्ति, तीन तलाक पर प्रतिबंध से मुस्लिम महिलाएं हुई सशक्त।

उन्होंने बताया कि

महिला आरक्षण विधेयक नारी शक्ति वंदन अधीनयम अथवा महिला आरक्षण विधेयक भारतीय संसद में प्रस्तुत किया गया वह विधेयक है इसके पारित होने से संसद में महिलाओं की भागीदारी 33ब्र सुनिश्चित हो जाएगी। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना से बड़ी बेटियों की संख्या बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ मोदी सरकार की एक महत्वपूर्ण योजना है जो भारत में लड़कियों के जीवन को बेहतर बनाने में मदद कर रही है यह योजना 2015 में शुरू की गई थी योजना के तहत बाल लिंग अनुपात में सुधार और लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही एक मातृत्व लाभ कार्यक्रम है यह योजना 2017 में शुरू की गई थी। महिला शक्ति केंद्र से महिलाएं हुई सशक्त महिला शक्ति केंद्र रूच्य भारत सरकार द्वारा 2017 में शुरू की गई है एक योजना है इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाना है यह योजना सामुदायिक भागीदार के माध्यम से महिलाओं को सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों से जोड़ने में मदद करती है। सुकन्या समृद्धि योजना से सुरक्षित हो रहा बालिकाओं का भविष्य मोदी सरकार की और से सुकन्या समृद्धि योजना 2015 में शुरू की गई थी इसका उद्देश्य बालिकाओं के भविष्य के लिए बचत को प्रोत्साहित करना है इस योजना के तहत 10 वर्ष से कम उम्र की बालिकाओं के नाम पर बैंक खाते खोले जा सकते हैं सुकन्या समृद्धि योजना भारत सरकार द्वारा शुरू की गई एक बचत योजना है जिसका उद्देश्य बालिकाओं के भविष्य को आर्थिक रूप से सुरक्षित करना है। उज्ज्वला योजना ने धुएं से दिलाई मुक्ति मोदी सरकार की महत्वाकांक्षी योजना में से एक है उज्ज्वला योजना प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस योजना को अपने कार्यकाल की शुरुआती दिनों में ही शुरू किया था यह योजना 2015 में शुरू की गई थी उज्ज्वला योजना खास तौर पर ग्रामीण महिलाओं के जीवन में बड़ा बदलाव लेकर आई है प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना का दायरा बढ़कर 10 करोड़ परिवार तक हो गया है। तीन तलाक पर प्रतिबंध से मुस्लिम महिलाएं हुई सशक्त मुस्लिम महिलाओं की जिंदगी में तीन तलाक पर प्रतिबंध कानून वह बदलाव लेकर आया है जिसका वह दशकों से इंतजार कर रही थी तीन तलाक, जिसे तलाक ए विछत भी कहा जाता है एक ऐसी प्रथा थी जिसमें एक मुस्लिम व्यक्ति अपनी पत्नी को मौखिक रूप से लिखित रूप में या इलेक्ट्रॉनिक रूप से तीन बार तलाक शब्द कहकर तलाक दे सकता था इस प्रथा को मोदी सरकार के प्रयासों के बाद अगस्त 2017 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा असवैधानिक घोषित किया गया था। महिला ई हाट योजना से महिलाओं के व्यापार को लगे पंख महिलाओं को आर्थिक रूप से समृद्ध बनाने के मकसद से मोदी सरकार ने इस योजना को साल 2016 में लॉन्च किया था इसका उद्देश्य महिला व्यापारियों को अपने प्रोडक्ट ऑनलाइन बेचने के लिए एक मंच प्रदान करना है यह योजना महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने और उनके उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में बढ़ावा देने मदद करती है। प्रधानमंत्री महिला शक्ति केंद्र योजना प्रधानमंत्री महिला शक्ति केंद्र योजना का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से सरकार द्वारा ग्रामीण महिलाओं के लिए उपलब्ध कराई गई योजनाओं के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए सशक्त बनाना है। सखी निवास कामकाजी महिला छात्रावास यह योजना कामकाजी महिलाओं को सुरक्षित और सुविधाजनक आवास प्रदान करती है यह योजना उन महिलाओं के लिए के लिए है जो अपने घर से दूर काम करती हैं और उन्हें रहने के लिए सुरक्षित स्थान की आवश्यकता होती है मोदी सरकार का लक्ष्य 523 छात्रावासों से 26,306 महिलाएं लाभान्वित करने का है। राष्ट्रीय महिला कोष योजना से महिलाओं को आसान लोन, वन स्टाफ सेंटर योजना दे रही है मार्गदर्शन। महापौर डॉ मंगलेश श्रीवास्तव ने कहा कि महिला ग्राम प्रधान और पंचायतों में भागीदारी उत्तर प्रदेश सरकार ने पंचायत चुनाव में महिलाओं के लिए 50ब्र सीटें आरक्षित की है जिससे वे राजनीति में आगे बढ़ सके। उत्तर प्रदेश मुख्यमंत्री सामूहिक विवाह योजना इस योजना के तहत गरीब परिवारों की बेटियों की शादी सरकार द्वारा करवाई जाती है और आर्थिक सहायताप्रदान की जाती है।

सम्मानित होने वाली महिलाओं में .. अमिता शर्मा- अधिवक्ता,

सुमन सिंह- प्राचार्य, डॉ सरिता सिंह- स्वास्थ्य कार्यकर्ता कुष्ठ नियंत्रण, डॉ रीता मिश्रा -पूर्व हॉकी खिलाड़ी एवं एकेडमी गरीब बच्चों का संचालन, सपना पांडे- एनजीओ सिविल डिफेंस, सरिता उपाध्याय - स्वयं सहायता समूह टिफिन कार्य, सरोज साहनी- स्वयं सहायता समूह समूह, रागिनी सरकारी -बुटीक, केशरी देवी- स्वयं सहायता समूह, रिंकू शुक्ला -स्वयं सहायता समूह, अर्चना मिश्रा- एनजीओ, सीमा मिश्रा- मेडिसिन व्यापारी, मंजू शुक्ला- समाजसेवी, रेखा रानी शर्मा- असिस्टेंट प्रोफेसर चित्रकला को सम्मानित किया गया।

विषय प्रस्तावना महानगर अध्यक्ष राजेश गुप्ता व

संचालन महानगर अध्यक्ष महिला मोर्चा श्वेता श्रीवास्तव ने व आभार क्षेत्रीय अध्यक्ष महिला मोर्चा अमिता गुप्ता ने किया एवं कार्यक्रम संयोजक वीरेंद्र पांडेय भी उपस्थित रहे। कार्यक्रम में मुख्य रूप से अनुपमा पाण्डेय, रंजूला रावत, अमिता गुप्ता, रागिनी जायसवाल, रानी मिश्रा, मीना श्रीवास्तव, रत्नेश मोर्या, ममता गुप्ता, ममता जायसवाल सहित महिला मोर्चा महानगर उपस्थित रहीं।

शिक्षा के अधिकार से वंचित हैं महराई गांव के बच्चे

- गांव से दो किमी दूर स्कूल के होने से पढ़ने नहीं जाते हैं महराई गांव के बच्चे
- अधिकारी और जनप्रतिनिधि पर लोग मौन साधे रहने का लगा रहे आरोप

शकुन टाइम्स संवाददाता

धानापुर। विकास खंड क्षेत्र के महराई गांव में इतने वर्षों बाद भी कोई प्राइमरी स्कूल नहीं है। जिसके चलते इस अब भी गांव के बच्चे सर्व शिक्षा के अधिकार से वंचित हैं। उक्त गांव की कुल आबादी तकरीबन 2000 है। गांव में कुछ ब्राह्मण और बनियां परिवारों को छोड़कर ज्यादातर परिवार केवल बिंद जाति के हैं। ऐसे में गांव में कोई स्कूल नहीं है। दूसरे पड़ोस के जिस गांव में स्कूल है भी तो वह उनकी आसान पहुंच से कोसों दूर हैं। यही वजह है कि यहां के ज्यादातर बच्चे या तो पढ़ाई लिखाई में रुचि नहीं लेते और अशिक्षित हैं। या फिर वे सर्व शिक्षा अभियान के मायने तक नहीं जानते हैं। गांव निवासी धर्मदेव बिंद, लक्ष्मण बिंद, सुनील दूबे, गोरख बिंद, लालता बिंद, अश्वनी तिवारी, नीरज, मनोज बिंद, मुन्ना बिंद, लाल बिहारी बिंद, राम अवध बिंद आदि अन्य का कहना है कि गांव में परिषदीय प्राइमरी स्कूल की मांग को लेकर उन्होंने कई बार अधिकारियों एवं जनप्रतिनिधियों से गुहार लगाई। सभी ने समय समय पर उन्हें भरोसा भी दिलाया। लेकिन आज तक गांव में कोई स्कूल नहीं बन पाया।

एक नहीं, तीन ग्राम पंचायतों में बंटा है महराई गांव

धानापुर। विकास खंड मुख्यालय से महज एक किमी की दूरी पर स्थित क्षेत्र का महराई गांव तीन तीन ग्राम पंचायतों में बंटा हुआ है। इस गांव की स्थिति यह है कि गांव का एक हिस्सा बभनियांव रायपुर, तो एक हिस्सा धानापुर में है। जबकि एक अलग हिस्सा गुरेहू (प्रेमाश्रयपुर) ग्राम पंचायत में बंटा हुआ है। ऐसे में इस गांव का बुनियादी विकास को लेकर भी अधिकारी और जनप्रतिनिधि मौन साधे रहते हैं। शायद यही वजह है कि उक्त गांव में विकास की किरणें भी अब तक नहीं पहुंच पाई हैं।

स्कूल के लिए केंद्रीय मंत्री ने लिखी थी चिट्ठी, बीएसए ने साधी चुप्पी

धानापुर। तत्कालीन सांसद एवं केंद्रीय भारी उद्योग मंत्री डॉ महेंद्र नाथ पांडेय ने 23 जुलाई 2023 को जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी को पत्र लिखकर मांग किया था कि जनहित में महराई गांव में प्राइमरी स्कूल का निर्माण कराया जाए। लेकिन उनकी इस पहल को भी शिक्षा विभाग के अफसरों ने नकार दिया। और इस मुद्दे को ठंडे बस्ते में डाल दिया है। ऐसे में सवाल यह उठ रहा है कि विकास पुरुष के नाम से विख्यात मंत्री जी के पत्र को शिक्षा विभाग के अफसर इतना हल्के में क्यों ले लिए

कोट

केंद्रीय मंत्री के चिट्ठी लिखने के बाद भी महराई गांव में स्कूल का नही बनना बेहद दुर्भाग्यपूर्ण है। अब तो जनप्रतिनिधियों को भी आत्ममंथन करना चाहिए।

गोविंद उपाध्याय,
संयोजक, धानापुर विकास मंच

महिला सशक्तिकरण केवल एक नारा नहीं बल्कि समाज के समग्र विकास का आधार है- दयाशंकर सिंह

शकुन टाइम्स संवाददाता

सकलडीहा। शनिवार को सकलडीहा पीजी कॉलेज में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर एक विशेष संगोष्ठी का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता कॉलेज के प्राचार्य प्रो. दयानिधि सिंह यादव ने की, जबकि मुख्य अतिथि के रूप में प्रो. दयाशंकर सिंह यादव उपस्थित रहे। इस अवसर पर बड़ी संख्या में छात्राएं, शिक्षकगण एवं अतिथि विद्वान उपस्थित रहे। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए प्रो. दयाशंकर सिंह यादव ने कहा कि ‘महिला सशक्तिकरण केवल एक नारा नहीं बल्कि समाज के समग्र विकास का आधार है। शिक्षा और आत्मनिर्भरता महिलाओं की प्रगति की कुंजी है, और हमें इसे सुनिश्चित करने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए। इस अवसर पर अन्य वक्ताओं ने भी अपने विचार रखे, डॉ. राजेश यादव ने कहा कि महिलाओं की भागीदारी समाज के हर क्षेत्र में सुनिश्चित की जानी चाहिए। महिला अधिकारों की रक्षा केवल कानून से नहीं, बल्कि सामाजिक जागरूकता से भी संभव है। डॉ. यज्ञनाथ पांडे ने कहा कि इतिहास साक्षी है कि जब-जब महिलाओं को समान अधिकार मिले हैं, तब-तब समाज और देश ने प्रगति की है। हमें महिलाओं को समान अवसर देने होंगे। डॉ. श्यामलाल यादव ने महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि महिलाओं का सशक्तिकरण केवल शैक्षिक और आर्थिक पहलुओं तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि यह उनकी आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान से भी जुड़ा है। डॉ. सीता मिश्रा ने अपने वक्तव्य में कहा कि महिला सशक्तिकरण का अर्थ केवल कार्यक्षेत्र में उनकी उपस्थिति से नहीं, बल्कि उनके अधिकारों की रक्षा और सम्मान से भी है। डॉ. अजय यादव ने कहा कि आज की नारी हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही है, लेकिन इसके बावजूद भी उन्हें कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। समाज को जागरूक होकर महिलाओं को उनका उचित स्थान देना चाहिए। डॉ. इंद्रजीत सिंह ने कहा कि नारी शक्ति को केवल सम्मान देना पर्याप्त नहीं, बल्कि उनके साथ समानता का व्यवहार करना भी आवश्यक है। कार्यक्रम के अंत में छात्राओं ने भी अपने विचार व्यक्त किए और महिला सशक्तिकरण पर चर्चा की।

उप प्राचार्य प्रो. दयानिधि सिंह यादव ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि हमारी शिक्षा प्रणाली में महिलाओं की भागीदारी को और अधिक बढ़ावा देने की आवश्यकता है। जब महिलाएं शिक्षित होंगी, तो पूरा समाज समृद्ध होगा।

महिला दिवस पर आयोजित हुई विभिन्न प्रतियोगिताएं

शकुन टाइम्स संवाददाता

चहनियाँ। क्षेत्र के पूर्व माध्यमिक विद्यालय सुरतापुर में शनिवार को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के उपलक्ष्य में विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस अवसर पर निबंध प्रतियोगिता, खेलकूद प्रतियोगिता, आशु भाषण प्रतियोगिता सहित कई अन्य गतिविधियाँ आयोजित की गईं। कार्यक्रम के दौरान सफल छात्र-छात्राओं को पुरस्कृत कर उनका उत्साहवर्धन किया गया। वहीं 28 फरवरी को आयोजित विज्ञान दिवस के अवसर पर हुई विज्ञान मॉडल प्रतियोगिता के विजेताओं को भी सम्मानित किया गया। प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले समूहों को विशेष पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में मनोज कुमार गुप्ता (ए.आर.पी. - विज्ञान) उपस्थित रहे। मनोज गुप्ता ने बच्चों को विज्ञान के प्रति रुचि बढ़ाने और नवाचार (इनोवेशन) की दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता विद्यालय की प्रधानाध्यापिका कौशल्या देवी द्वारा की गई। इस अवसर पर विद्यालय के वरिष्ठ शिक्षक सुरेंद्र नाथ त्रिपाठी, अनिल पांडेय, जलीमुन निशा, नीलम देवी, कुसुम देवी आदि उपस्थित रहे।

रामकली महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय में निकाली गई विश्व सद्भावना रैली

शकुन टाइम्स संवाददाता

जमानिया। क्षेत्र के दरौली गांव स्थित रामकली महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय में शनिवार को राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई द्वारा विश्व सद्भावना रैली का आयोजन किया गया। इस रैली में महाविद्यालय की छात्राओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया और सामाजिक एकता का संदेश दिया। रैली के शुभारंभ से पूर्व छात्राओं को इसके महत्व और उद्देश्य की विस्तृत जानकारी दी गई। तत्पश्चात महाविद्यालय के प्रबंधक डॉ. हरीशचंद्र सिंह ने हरी झंडी दिखाकर रैली को रवाना किया। छात्राओं ने सद्भावना, एकता और भाईचारे के नारों से माहौल को गुंजायमान कर दिया। हाथों में संदेशात्मक स्लोगन लिखी तख्तियां लिए हुए छात्राएं गांव की गलियों से गुजरते हुए सामाजिक समरसता का संदेश दे रही थीं।

रैली पुन: महाविद्यालय लौटकर एक सभा में परिवर्तित हो गई, जहां प्रबंधक डॉ. हरीशचंद्र सिंह ने छात्राओं को संबोधित करते हुए सामाजिक सौहार्द और सद्भावना की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि ऐसे आयोजन समाज में एकता, भाईचारे और शांति को मजबूत करने का कार्य करते हैं। कार्यक्रम की समाप्ति की घोषणा महाविद्यालय की प्राचार्य डॉ. ज्योत्सना पांडेय ने की। इस अवसर पर कमलेश कुमार सिंह, अभय पांडेय, राम आशीष सिंह, आलोक कुमार सिंह, निशू यादव, अंजली यादव, विनीता यादव, सुनीता मौर्य सहित महाविद्यालय के शिक्षकगण और बड़ी संख्या में छात्राएं उपस्थित रहीं।

नि:शुल्क स्वास्थ्य परिक्षण में सैकड़ों लोगों की हुई जांच

शकुन टाइम्स संवाददाता

धानापुर। भारत सरकार के प्रतिष्ठान राइट्स लिमिटेड के सी.एस.आर. कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वयं सेवी संस्था अभिनव विकास समिति लखनऊ द्वारा शनिवार को बुद्धपुर (बूढ़ेपुर) स्थित माया आई.टी.आई कॉलेज परिसर में एक दिवसीय नि:शुल्क स्वास्थ्य परीक्षण एवं दवा वितरण शिविर का आयोजन किया गया। विदित हो कि भारत सरकार के प्रतिष्ठान राइट्स लिमिटेड के सी.एस.आर. कार्यक्रम के अन्तर्गत से स्वयं सेवी संस्था अभिनव विकास समिति शाखा - लखनऊ ने समाज के जरूरतमंद और गरीब वर्ग के लोगों के स्वास्थ्य देखभाल, स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सुरक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से एक दिवसीय शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में क्षेत्र के स्थानीय सैकड़ो लोगो ने उत्साहित होकर भाग लिया और अपने स्वास्थ्य की जाँच कराई। शिविर में फिजीशियन, हड्डी विशेषज्ञ, स्त्री रोग विशेषज्ञ सहित वरिष्ठ चिकित्सकों ने स्वास्थ्य परिक्षण कर नि:शुल्क दवा वितरण भी किया गया। कैम्प में ब्लड प्रेशर, खून की जाँच, शुगर, हीमोग्लोबिन, बज़न, सामान्य स्वास्थ्य जाँच एंव नेत्र प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गई। कैम्प में कुछ मरीजो को उच्च स्तरीय चिकित्सा केन्द्रो से भी सम्पर्क करने हेतु सन्दर्भित किया गया। स्वास्थ्य प्रशिक्षण में कुछ ऐसे भी ग्रामीण व्यक्ति और महिलायें भी उपस्थित हुए जिन्होने उसके पूर्व कभी भी स्वास्थ्य परिक्षण हेतु कभी खून अथवा ब्लड प्रेशर की जाँच ही नही कराई थी। इस कैम्प में वर्धन हॉस्पिटल एंव मेट्रो ऋषिदेव हॉस्पिटल के वरिष्ठ चिकित्सकों तथा पैरामेडिकल स्टाफ द्वारा सक्रिय सहयोग प्रदान किया गया।

तीन लोग के खिलाफ मुकदमा दर्ज कर जाँच में जुटी पुलिस

शकुन टाइम्स संवाददाता

जमानियां। क्षेत्र के जीवपुर बाजार स्थित मोनू ज्वेलर्स से तीन जोड़ी कान के झुमके (झाले) चोरी के मामले में दुकान संचालक मोनू वर्मा ने कोतवाली में शुक्रवार को तहरीर दी। जिस पुलिस ने तहरीर के आधार पर तीन नामजद के विरूद्ध मुकदमा दर्ज कर जांच में जुट गई है।

दुकान संचालक मोनू निवासी ग्राम ढढनी (भानमल राय), थाना सुहवल ने थाना में तहरीर देकर आरोप लगाया कि 18 फरवरी 2025 को तीन लोग आभूषण खरीदने दुकान पर आए। उन्होंने एक मंगलसूत्र और एक जोड़ी कान के झुमके कुल कीमत ?31,500 का सामान खरीदा और ?17,000 नगद भुगतान कर शेष राशि 3 मार्च 2025 को देने का वादा किया। 3 मार्च को वे दोबारा दुकान पर आए और और भी आभूषण देखने लगे। इस दौरान ?5,000 और नगद देकर दुकानदार को विश्वास में लिया। जब दुकान में ग्राहक बढ़ गए।

तो आरोपी जल्दी-जल्दी दुकान से निकल गए। बाद में दुकानदार ने जब अपने आभूषणों का मिलान किया, तो तीन जोड़ी कान के झुमके (कुल वजन लगभग 10 ग्राम, कीमत ?80,000) गायब मिले। पीड़ित ने कई दिनों तक ग्राम जीवपुर में आरोपियों की तलाश की, लेकिन वहां उनके बारे में कोई जानकारी नहीं मिली। स्थानीय लोगों ने बताया कि इस नाम का कोई व्यक्ति वहां नहीं रहता। दुकानदार द्वारा दिए गए नंबर पर कई बार कॉल करने पर वह या तो स्विच ऑफ मिला या नेटवर्क क्षेत्र से बाहर बताया गया। जिसके बाद पीड़ित ने थाना में तहरीर देकर कानूनी कार्रवाई की मांग की है। प्रभारी निरीक्षक प्रमोद कुमार सिंह ने बताया कि तहरीर के आधार पर तीन नामजद के विरूद्ध मुकदमा दर्ज किया गया है। जांच की जा रही है।

नोनहरा थाने पर नायब तहसीलदार विपिन चौरसिया ने सुनी फरियाद

शकुन टाइम्स संवाददाता

गाजीपुर। शासन के निर्देश पर प्रत्येक माह के द्वितीय और चतुर्थ शनिवार को लगने वाले समाधान दिवस के क्रम में शनिवार को नोनहरा थाना परिसर में नायब तहसीलदार विपिन कुमार चौरसिया ने ग्रामीणों की समस्या को सुना और उनके निस्तारण हेतु संबंधित को निर्देशित किया। इस दौरान कुल सात प्रार्थना पत्र आए जिसमें मौके पर ही 4 का निस्तारण किया गया। अधिकांश मामले राजस्व विभाग से संबंधित थे जिसको नायब तहसीलदार विपिन कुमार चौरसिया ने पुलिस और राजस्व टीम से संयुक्त पहल कर मामले को हल करने की अपील की। थाना दिवस के दौरान सबसे अधिक अधिक ध्यान संमनपुर के एक जमीनी विवाद के मामले ने खींचा जहां पर दो पाट्टीदार आपस में काफी देर तक अधिकारियों के समक्ष गहमागहमी करते रहे। प्रार्थना पत्र में पारा गांव के जवाहर गुप्ता का जमीनी विवाद, रोहिणी गांव के आजाद कुमार बिंद का जमीनी विवाद, भाला गांव के दिवाकर विक्रम का जल निगम से संबंधित विवाद, सुसुंडी गांव के स्नेह लता का नाली विवाद आदि मामले आए। इस मौके पर थानाध्यक्ष दीपक कुमार, राजस्व निरीक्षक अमरनाथ, लेखपाल सुरेंद्र यादव, लेखपाल मनीष, लेखपाल दिग्विजय राय आदि उपस्थित रहे।

महिला दिवस पर आजीविका मिशन की दीदियां हुई सम्मानित

शकुन टाइम्स संवाददाता

धानापुर। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर शनिवार को राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन द्वारा संचालित शिवशक्ति आजीविका संकुल संघ धानापुर में समूह की दीदियों को खंड विकास अधिकारी धानापुर द्वारा सम्मानित किया गया। जिसमें समूह की दीदियों द्वारा किए गए सराहनीय कार्यों को सराहा गया। और आगे भी निरंतर बढ़ने के लिए उत्साहित किया गया।

कार्यक्रम में सभी दीदियां बीडीओ द्वारा सम्मान पत्र पाकर बहुत उत्साहित हुई। कार्यक्रम में खंड विकास अधिकारी विजय कुमार, एन.आर.एल.एम ब्लॉक स्टॉफ, समीना बेगम (सी0एल0एफ0 अध्यक्ष), सीमा विश्वकर्मा (सी0एल0एफ0, एम0बी0के0) शीला देवी, कुसुम भारती, किरण, सोनी देवी, सुनीता, पूनम, ममता देवी, कालिंदी देवी, मालती देवी,उषा देवी, कविता

देवी, पुष्पा देवी, प्रेमा, शांति, पार्वती,संगीता, अंतिमा सिंह, अनीता, उर्मिला, अंजना, मंशा, गीता, अफसाना बेगम, रम्पी सिंह, सरिता तिवारी, गीतांजलि, मनोरमा, प्रियंका, चंदा,कुसुम, रिंकी, रीना, सुशीला, रिजवाना बेगम, शांति, दुलारी, राधिका पांडेय, बंदना देवी और अनेकों समूह की दीदियों द्वारा प्रतिभाग किया गया।

दिव्यांगों के हित को लेकर सरकार उठा रही ठोस कदम- विधायक

शकुन टाइम्स संवाददाता

सकलडीहा। शनिवार को विकासखंड परिसर में दिव्यांग जन शक्तिकरण विभाग की तरफ से दिव्यांगजनों को कार्यक्रम आयोजित कर ट्राई साइकिल सहित अन्य उपकरण वितरित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि एवं विशिष्ट अतिथि द्वारा सरस्वती के तैल चित्र पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया।

कार्यक्रम के दौरान मुख्य अतिथि सैयदराजा विधायक सुशील सिंह, विशिष्ट अतिथि ब्लॉक प्रमुख सकलडीहा अवधेश सिंह तथा दिव्यांगजन अधिकारी राजेश नायक द्वारा दिव्यांगजनों को माला पहनाकर ट्राईसाइकिल का वितरण किया गया। कार्यक्रम में उपस्थित 76 दिव्यांगजनों को ट्राई साइकिल सहित अन्य उपकरण वितरित किए गए। दिव्यांगजन वितरण कार्यक्रम को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि सैयदराजा विधायक सुशील सिंह ने कहा कि भाजपा सरकार दिव्यांग जनों के उत्थान एवं विकास को लेकर लगातार ठोस कदम उठा रही है। एक तरफ जहां पेंशन में बढ़ोतरी करआर्थिक मजबूती प्रदान कर रही है। तो वहीं दूसरी तरफ आवास सहित महत्वपूर्ण योजनाओं को संचालित कर समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का काम कर रही है। विशिष्ट अतिथि ब्लॉक प्रमुख सकलडीहा अवधेश सिंह ने कहा कि मानसिक या शारीरिक दिव्यांग बच्चों के उत्थान हेतु सरकार द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में सुअवसर प्रदान किए जा रहे हैं। विद्यालयों में गरीब, अक्षम एवं कमजोर बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार अधिनियम के अंतर्गत मुफ्त नामांकन एवं शिक्षा व्यवस्था, विभिन्न नौकरियों में दिव्यांग बच्चों हेतु आरक्षण की व्यवस्था आदि के बारे में बताया। जिला दिव्यांगजन अधिकारी राजेश नायक ने बताया कि सरकार द्वारा दिव्यांग पुरुष और महिलाओं के विवाह पर 35,000 रुपये प्रोत्साहन राशि दी जाती है। साथ ही, दिव्यांगजनों के पुनर्वास और आत्मनिर्भरता हेतु कई योजनाएं संचालित की जा रही हैं। बताते चलें कि दिव्यांगजन सशक्तिकरण विभाग द्वारा जनपद में तिथिवार दिव्यांग जनों को ट्राई साइकिल सहित अन्य उपकरणों का वितरण बड़े पैमाने पर कार्यक्रम आयोजित कर किया जा रहा है साथ ही दिव्यांगजनों को पेंशन सहित अन्य सुविधाओं को लेकर कैंप के माध्यम से पंजीकरण की सुविधा उपलब्ध कराते हुए सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के बारे में भी जानकारी प्रदान की जा रही है इस अवसर पर दिव्यांगजनों सहित सैकड़ो लोग उपस्थित रहे।

महिलाओं को समानता का अवसर और अधिकारी दिलाना ही विकसित भारत का संकल्प

- महिलाओं की स्थिति, सुरक्षा और चुनौती पर संगोष्ठी का हुआ आयोजन
- वक्ताओं के व्यक्त किया अपना अपना विचार

शकुन टाइम्स संवाददाता

धानापुर। कस्बा स्थित शहीद हीरा सिंह राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय में शनिवार को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर कामता प्रसाद विद्यार्थी सांस्कृतिक क्लब द्वारा संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. प्रवीण भारती, डॉ. प्रशांत मिश्रा, डॉ. अंकित पटेल तथा डॉ. दिनेश कुमार ने भारत में महिलाओं की स्थिति, सुरक्षा और चुनौती पर अपने विचार रखें।

डॉ. मिथलेश कुमार ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के इतिहास तथा महत्व पर प्रकाश डालते हुए बताया कि यह दिवस नारी सशक्तिकरण, महिला अधिकारों तथा समानता के लिए लंबी लड़ाई की देन है। डॉ. प्रशांत मिश्र ने कहा कि महिला और पुरुष समाज रूपी रथ के दो पहिए हैं। देश की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विकास में दोनों की समान भूमिका होती है। डॉ. प्रवीण भारती ने कहा कि सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में महिलाओं को समानता का अवसर और अधिकार दिलाकर ही हम विकसित भारत की संकल्प को पूरा कर सकते हैं। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे प्राचार्य प्रो. (डॉ.) सुभाष राम ने कहा कि महिलाओं को स्वयं एकजुट होकर अपने अधिकार और सशक्तिकरण के लिए लड़ाई लड़ना होगा। उन्होंने कहा कि महिलाओं को सम्पूर्ण समानता दिलाने के लिए लैंगिक भेदभावपूर्ण विचारों और व्यवस्थाओं का उन्मूलन करना सबसे जरूरी है। इस अवसर पर डॉ. सरोज पांडेय, डॉ. प्रवीण भारती, डॉ. प्रशांत, डॉ.मिथलेश, सत्यप्रकाश, अंकित, नंदलाल, दिनेश, बाबूराम, पुष्कर आदि रहे।

महिलाओं को मिले बराबरी का हक- युवा मंच

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर हुई गोष्ठी

शकुन टाइम्स संवाददाता

म्योरपुर/ सोनभद। महिलाओं को संविधान में बराबरी का अधिकार दिया गया है और किसी भी प्रकार के लैंगिक भेदभाव पर रोक लगाई गई है। बावजूद इसके अभी भी महिलाओं को समान काम का समान वेतन नहीं मिलता है, पैतृक संपत्ति और जमीन में महिलाओं को अधिकार नहीं मिलता और उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक, मानसिक और शारीरिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस साल महिला दिवस को बराबरी का अधिकार दिवस के रूप में मनाने की अपील की है। इसलिए महिलाओं को संविधान में दिए गए बराबरी के हक और नागरिक की हैसियत और उसके सम्मान को हर हाल में देना सरकार का दायित्व है, जिसे उसे हर हाल में पूरा करना चाहिए। यह बातें आज अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर रासपहरी में आयोजित युवा मंच की गोष्ठी में उठी। गोष्टी के अध्यक्षता युवा मंच की जिलाध्यक्ष रूबी सिंह गोंड और संचालन जिला संयोजक सविता गोंड ने किया। गोष्ठी में महिला संघर्षों और अधिकारों पर लिखा पर्चा भी पढ़ा गया। गोष्ठी में कहा गया कि शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार का अधिकार महिलाओं के सम्मानजनक जीवन के लिए पाना बेहद जरूरी है। आज लड़कियों का सरकारी डिग्री कॉलेज न होने के कारण बहुत बड़ी प्रतिभाएं नष्ट हो जा रही है। प्रसव के समय काफी संख्या में महिलाओं की मृत्यु होती है, कुपोषण के कारण खून की कमी है और इलाज के लिए सरकारी अस्पतालों में स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉक्टर तक नहीं है। महिला स्वयं सहायता समूह के नाम पर प्रचार ज्यादा हो रही है। उनका महिलाओं की आर्थिक समृद्धि और उत्पादकता में योगदान नहीं के बराबर है। कहा गया कि देश के 200 पूंजी घरानों की संपत्ति पर टैक्स लगाकर इतने संसाधन जुटाए जा सकते हैं जिनसे महिलाओं और आम नागरिकों की सामाजिक सुरक्षा और सम्मानजनक जीवन सुनिश्चित किया जा सकता है।

गोष्ठी में गुंजा गोंड, राजकुमारी गोंड, एआईपीएफ जिला संयोजक कृपाशंकर पनिका, प्रमिला पनिका, अनिता गोंड, दिनेशचन्द्र यादव, रेशमा कुमारी, जुगनू सिंह, दुखनी देवी आदि ने अपने विचार रखे।

आप सांसद बोले-गंगा का पानी आचमन योग्य नहीं

संजय सिंह ने बजट पर उठाए सवाल, कहा, व्हाइट पेपर जारी करे जुमला सरकार

शकुन टाइम्स संवाददाता

लखनऊ । राजधानी लखनऊ में आम आदमी पार्टी (आप) के राज्यसभा सांसद संजय सिंह ने प्रेस कॉन्फ्रेंस की। इस दौरान उन्होंने डबल इंजन सरकार पर जमकर हमला बोला। उन्होंने बजट खर्च से लेकर गंगा सफाई तक सरकार की नीतियों पर सवाल उठाए और बीजेपी को जुमला पार्टी बताया। संजय सिंह ने कहा 11 साल में कितने बंगलादेशी घुसपैठियों को निकाला गया? बीजेपी सरकार घुसपैठियों को रोकने में नाकाम रही। वीआईपी लोगों को गंगा में स्नान के दौरान बेवजह भीड़ बढ़ाने से बचना चाहिए था। संजय सिंह ने दावा किया कि सरकार बड़े बजट का दावा करती है, लेकिन उसे खर्च ही नहीं कर पाती। संजय सिंह ने कहा सरकार बजट पर व्हाइट पेपर जारी करे। बीजेपी नफरत फैलाने और लोगों को बांटने का काम

कर रही है, जबकि यूपी में 8 लाख बच्चे सरकारी स्कूल छोड़ चुके हैं। आप नेता ने केंद्रीय मंत्री भूपेंद्र यादव के मंत्रालय सेंट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड की रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा- गंगा का पानी आचमन और नहाने योग्य नहीं है। उन्होंने पूछा- गंगा सफाई के 40,000 करोड़ रुपए का क्या हुआ? संजय सिंह ने बीजेपी को जुमला पार्टी बताते हुए कहा दिल्ली की हर महिला को 2500 देने का वादा किया गया था, लेकिन इतनी शर्तें लगा दी गई कि 10: महिलाओं को भी फायदा नहीं मिला।

संक्षिप्त सामाचार

अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर रंगारंग कार्यक्रम का आयोजन

लखनऊ। आज श्री गुरु नानक गर्ल्स डिग्री कॉलेज लखनऊ में आज अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर रंगारंग कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ सुरभि जी गर्ग ने इस वर्ष की थीम सभी महिलाओं और लड़कियों के लिए रू अधिकार, समानता और सशक्तिकरण पर छात्राओं को वीरांगनाओं के द्वारा किए गए विभिन्न महान कार्यों और आज की महिलाओं के विभिन्न पदों पर आसीन होने पर गौरवान्वित होना और उनकी तरह बनने को प्रेरित किया। आज के समय को देखते हुए डिजिटल ।प् और इंटरनेट की कुरीतियों से दूर रहे। खूब खुशरहे और समाज में अच्छाई बांटे। इसके पश्चात महाविद्यालय की समस्त अध्यापिकाओं ने अपने अपने विचार प्रस्तुत किए। डॉ स्वाति खरे सहायक प्रवक्ता मनोविज्ञान शास्त्र विभाग द्वारा उन्होंने बहुत मधुर गाना गया। विभिन्न छात्राओं ने स्वरचित रचनाओं के द्वारा कविताएं सुनाई, मधुर गानों और नृत्यों के द्वारा आज के कार्यक्रम को सफल बनाया।

इंदिरा नगर में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस उल्लास के साथ मनाया

लखनऊ ।इंदिरा नगर ए ब्लॉक के योगा पार्क में आज अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर कॉलोनी की सभी महिलाओं को गुलाब का फूल देकर सम्मानित किया गया। इसके साथ ही कॉलोनी में प्रतिदिन सफाई करने वाली कमला देवी को भी माला पहनाकर विशेष रूप से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम के दौरान महिलाओं की महत्ता पर विचार रखते हुए आरके जोशी, गोपेन्द्र वर्मा, कमल सक्सेना, स्वाति गोयल और बीना त्यागी ने सुंदर गीत प्रस्तुत किए। कॉलोनिवासियों के सहयोग से आयोजित इस कार्यक्रम में मुख्य वक्ता राजीव गोयल ने नारी शक्ति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि नारी सभी रूपों में पूजनीय है और समाज के हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

युवक का शव रखकर रास्ता जाम,दोस्तों पर हत्या का आरोप

लखनऊ । राजधानी लखनऊ के इंदिरा नगर में शादी में ले गए युवक की हत्या कर दी गई। परिजनों ने गली के बाहर शव रखकर आरोपियों की गिरफ्तारी की मांग की है। परिजनों का कहना है कि जब तक गिरफ्तारी नहीं होगी शव का अंतिम संस्कार नहीं करेंगे। मौके से एसएचओ इंदिरानगर अपनी टीम के साथ पहुंचकर परिवार को समझा रहे हैं। इंदिरा नगर का चंदन गांव निवासी शाहनवाज (20) पुत्र मोहम्मद नवाबु ड्राइवरी का काम करता था। शाहनवाज के चाचा रहीम का कहना है शुक्रवार रात करीब 8 बजे मोहल्ले के रहने वाले प्रदीप व प्रभात चचेरे भाई पंकज की शादी में गोसाईगंज लेकर गए थे।

एपी सेन कॉलेज में 'पढ़े महाविद्यालय बढ़े महाविद्यालय' अभियान की शुरुआत

लखनऊ। लखनऊ के चारबाग स्थित एपी सेन मेमोरियल गर्ल्स कॉलेज में महिला दिवस पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया। इसमें राज्यपाल के आदेश पर 'पढ़े महाविद्यालय, बढ़े महाविद्यालय' अभियान की शुरुआत हुई।

होली के त्यौहार को मनाए शांति से, हल्के साधारण रंग करें प्रयोग- मोनिका सिंधु

शकुन टाइम्स संवाददाता

हापुड़। आ गया है आपका होली का त्यौहार खुशियों का त्यौहार शांति का संदेश होली का त्यौहार, हापुड़ से एडवोकेट चौधरी मोनिका सिंह सिंधु ने की जनपद वासियों से बड़ी सुनहरी और अच्छी अपील होली के पावन पर्व को लेकर, होली के प्रॉपर करें हल्के और साधारण रंग प्रयोग जो रंग किसी को दिक्कत ना करें, बाजारों में बिकते हैं रंग बड़े केमिकल वाले भी जो आपके चेहरे को कर सकते हैं खराब, होली का त्यौहार है एक खुशियों का त्यौहार मिलते हैं एक दूजे के गले देते हैं बधाई, बनाए घर के अंदर अच्छे पकवान करें सभी का सम्मान, एडवोकेट चौधरी मोनिका सिंह सिंधु ने बताया कि देखा जाता है कि आजकल कुछ युवा बाजारों से बड़े ही सख्त रंग खरीद लेते हैं और वह रंग काफी खतरनाक होते हैं, उन्होंने जनपद वासियों से करी अपील इस वर्ष होली के पर्व को

मनाई खुशियों से करें हल्के रंग प्रयोग जो बातें एक दूजे को खुशियां, ना करें किसी को परेशान, कई दफा देखा जाता है की होली के पर्व पर कुछ लोग होली को हुड़दंग का रूप देते हैं जिसके कारण हमारे शासन और प्रशासन को भी समस्या होती है, ना करें कोई ऐसा कृत जिससे होना पड़े हम सभी को शर्मिंदा, इस वर्ष 2025 की होली को बनाए जनपद में खुशियों की होली शांति की होली करती हूं मैं आप सभी से अपील आप सभी की छोटी बहन एडवोकेट चौधरी मोनिका सिंह सिंधु।

श्मशान घाट का निर्माण रुकने पर नगर निगम पहुंचे लोगमेयर से की शिकायत

लखनऊ। राजधानी लखनऊ के गणेशपुर स्थित शहीद भगत सिंह प्रथम वार्ड में श्मशान घाट को लेकर दो पक्ष आमने- सामने आ गए हैं। शनिवार को नगर निगम मुख्यालय पर पहुंचे लोगो ने विरोध किया। आरोप है कि गलत ढंग से निर्माण कार्य रोक दिया गया। लोगों का कहना है कि यहां पर 100 वर्ष से उनके परिवार के लोग अंतिम संस्कार करते आ रहे हैं। बावजूद इसके कुछ लोगों के विरोध के चलते निर्माण कार्य रोक दिया गया। लोगों ने शिकायत देते हुए कहा कि लगभग 100 वर्षों से भूमि पर हिन्दू रीति रिवाज से अगल बगल के गांवों के लोगों का दाह संस्कार किया जा रहा है। पहले लोगों द्वारा इस भूमि में पक्की समाधियां बनी हुई हैं, जो वर्षों पूरानी है और लोगों भावनाएं यहां से जुड़ी है। आरोप है भूमाफियाओं द्वारा जमीन पर लगातार कब्जा हो रहा है। कुछ लोग जो विरोध कर रहे उनके भी मकान इसी बंजर में भूमाफियाओं के मिली भगत से बने हुए हैं।

क्षत्रिय कल्याण बोर्ड का गठन शीघ्र हो: कुँ हरिवंश सिंह

राष्ट्रीय प्रबन्ध कार्यकारिणी में 11 सूत्रीय एजेण्डे पर मंथन

शकुन टाइम्स संवाददाता

लखनऊ । अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा के निर्धारित एजेण्डे पर प्रेस क्लब सभागार लखनऊ में संगठन के त्रैवार्षिक आय-व्यय के साथ संगठनात्मक चुनाव पर पदाधिकारियों के साथ वार्ता के बाद नोएडा से फोनरवा चेयरमैन रहे राष्ट्रीय उपाध्यक्ष ठॉ एनपी सिंह को निर्वाचन अधिकारी नियुक्त किया गया एवं पर्यवेक्षक के रूप में वीरांगना राष्ट्रीय अध्यक्ष श्रीमती नीतू सिंह के नाम पर सहमति बनी। संगठनात्मक चुनाव 21, 22 जून को आयोजित होगे। इस सम्बन्ध में 20 जून से नामांकन पत्र का प्रारूप सम्बन्धित पदों के लिए सुप्रीम कोर्ट के अधिवक्ता महेन्द्र सिंह की उपस्थिति में निर्वाचन अधिकारी की देख-रेख में सदस्यता शुल्क के साथ जमा करना होगा। राष्ट्रीय अध्यक्ष पूर्व सांसद कुँ हरिवंश सिंह ने कहा कि वर्तमान समय में

राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में क्षत्रियों के सामने बहुत चुनौतियाँ हैं। क्षत्रिय कल्याण बोर्ड का गठन होना बहुत जरूरी है। सनातन बोर्ड भी बने, हम उसका समर्थन करते हैं। उन्होंने कहा कि रामजन्मभूमि ट्रस्ट में एक क्षत्रिय को नामित किया जाये। संगठन के देशव्यापी अभियान पर खुशी जाहिर करते हुए संगठनात्मक चुनाव की घोषणा के साथ कुँ हरिवंश सिंह ने कहा कि बिना भेदभाव के कार्यकारिणी के सभी सदस्यों के साथ बेहतर तालमेल रहा है। लखनऊ में महाराणा प्रताप भवन, शोध संस्थान संग्रहालय बनाने का सपना अधूरा है, क्योंकि सरकार ने अभी तक प्रस्ताव पर सहमति जताने के बाद सरकारी दर पर 5 एकड़ भूमि उपलब्ध नहीं करायी है। इस अवसर पर 11 प्रस्तावों पर सहमति के साथ संगठन के त्रैवार्षिक आय-व्यय के साथ यह भी स्पष्ट किया गया है कि जिसकी निष्ठा, उसकी बढ़ेगी प्रतिष्ठा । वरिष्ठ राष्ट्रीय महामंत्री राघवेन्द्र सिंह राजू ने कहा कि देश भर में खाड़ी से पहाड़ी तक एकता, एकजुटता अभियान सफल रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर प्रशस्ति पत्र देकर किया गया सम्मानित

शकुन टाइम्स संवाददाता

हापुड़। शनिवार को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के शुभअवसर पर अध्यक्षया जिला पंचायत हापुड़ रेखा नागर एवं श्रीमती प्रेरणा शर्मा डीएम के द्वारा विकास भवन के सभागार में स्वच्छता एवं स्वयं सहायता समूह में सराहनीय योगदान देने वाली महिलाओं को प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया।

शनिवार को विकास भवन के सभागार मे अध्यक्षा जिला पंचायत हापुड़ रेखा नागर एवं डीएम के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में उत्कृष्ट महिला नेताओं की पहचान कर उक्त दिवस पर महिला सफाई कर्मचारी, स्वच्छता परिसम्पत्तियों के रख रखाव का प्रबन्धन करने वाली स्वयं सहायता समूह में कार्यरत महिला को प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया गया तथा संचालित एक समुदाय जिसमें महिला किशोर चैम्पियन,

स्वच्छता कार्यकर्ता ग्राम पेयजल एवं स्वच्छता समिति के सदस्य और ग्रामीण वॉश के संदेशों को बढावा देने के सम्बन्ध में जागरूक किया गया। इसके साथ ही इस कार्यक्रम मे सोशल मीडिया हैण्डल करने वाली टीम में शामिल महिलाओं के द्वारा अपने-अपने सुझाव जिलाधिकारी एवं अध्यक्षा के समक्ष रखे। डीएम ने सरकार के द्वारा चलायी जा रही योजनाएं जैसे शौचालय,आवास,उज्जवला योजना आदि और महिलाओं के आत्म निर्भर बनाये जाने के सम्बन्ध में महिलाओं को जागरूक किया। इसके साथ ही विकास खण्ड स्तर पर जनपद की ग्राम पंचायतों में पंचायत भवन पर बैठक के माध्यम से भी जनपद के खण्ड विकास अधिकारी एवं सहायक विकास अधिकारी तथा सम्बन्धित सचिवों के द्वारा महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने के सम्बन्ध में प्रेरित किया गया।

जिला स्तर पर इस कार्यक्रम में विकास भवन के सभागार में सीडीओ हिमांशु गौतम के द्वारा महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने के सम्बन्ध में अपने सुझाव प्रकट किये और अन्त में मुख्य विकास अधिकारी के द्वारा इस कार्यक्रम में शामिल सभी महिलाओं को धन्यवाद ज्ञापित किया गया ।कार्यक्रम में देवेन्द्र प्रताप सिंह जिला विकास अधिकारी, स्मिता सिंह जिला प्रबोशन अधिकारी मौजूद रहे तथा कार्यक्रम का संचालन शिव बिहारी शुक्ला जिला पंचायत राज अधिकारी के द्वारा किया गया।

पसमांदा समाज ने वक्फबिल का विरोध किया, देशव्यापी आंदोलन की चेतावनी

शकुन टाइम्स संवाददाता

लखनऊ। राजधानी लखनऊ में पसमांदा मुस्लिम समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष अनीस मंसूरी ने वक्फ संशोधन विधेयक पर नाराजगी जताई। उन्होंने कहा कि मुसलमानों की संपत्तियों पर सरकारी कब्जे की साजिश है। अगर सरकार ने यह विधेयक जबरन लागू करने की कोशिश किया तो पसमांदा मुसलमान इसके खिलाफ राष्ट्रव्यापी आंदोलन छेड़ने के लिए मजबूर होंगे। अनीस मंसूरी ने कहा कि वक्फ संपत्तियां गरीब मुसलमानों की भलाई के लिए हैं। यह हमारे बुजुर्गों की दी गई अमानत है। इस पर किसी भी सरकार का अधिकार नहीं हो सकता। लेकिन अब सरकार इन संपत्तियों को अपने नियंत्रण में लेने की योजना बना रही है। हम इसे किसी भी कीमत पर स्वीकार नहीं करेंगे। पहले दिन से इसका विरोध

जारी था और आगे भी जारी रहेगा। अनीस मंसूरी ने कहा कि वक्फ संपत्तियों की कीमत लाखों करोड़ों रुपये में है। सरकार इन संपत्तियों पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाहती है। उन्होंने कहा कि कानून बना, तो धीरे-धीरे गरीब मुसलमानों कि संपत्तियां सरकार के हाथों में चली जाएंगी। हमारे रोजगार खत्म किए गए, और अब हमारी संपत्तियों पर भी कब्जा करने की साजिश हो रही है। पसमांदा मुसलमानों को इसका सबसे बड़ा नुकसान होगा। उन्होंने कहा कि पसमांदा मुस्लिम समाज के सभी संगठन, बुद्धिजीवी विधेयक के खिलाफ एकजुट हों। अगर सरकार ने अपनी जिद नहीं छोड़ी, तो देशभर में बड़ा आंदोलन होगा। पसमांदा समाज अपनी संपत्तियों को बचाने के लिए हरसंभव कदम उठाएगा। यह सिर्फ एक विधेयक नहीं, बल्कि हमारे अस्तित्व पर हमला है। अगर इसे रोका नहीं गया।

12 वर्षीय नेपाली लड़के को लगी गंभीर चोट, लखनऊ के टेंडर पाम अस्पताल के डॉक्टरों ने की सफल सर्जरी

लखनऊ। नेपाल के एक 12 वर्षीय लड़के के पैरों में एक धातु की रोड घुस गई थी, जिससे रक्तवाहिनियों और नसों को नुकसान हुआ। इस गंभीर स्थिति में बच्चे को तुरंत लखनऊ के टेंडर पाम अस्पताल लाया गया, जहां विशेषज्ञों की एक टीम ने उसे सफलतापूर्वक इलाज प्रदान किया और उसकी टांग को बचा लिया। इस प्रकार की गंभीर चोटों में रक्तवाहिनियों और नसों के साथ हड्डी और नरम ऊतकों का जुड़ाव दुर्लभ होता है, जिसके लिए एक समन्वित शल्य चिकित्सा टीम की आवश्यकता होती है। यदि समय पर हस्तक्षेप न किया जाए या विशेषज्ञता का अभाव हो, तो अंग का नुकसान या स्थायी विकलांगता हो सकती है। इस मामले में विशेषज्ञों की टीम ने सटीक और त्वरित इलाज से बच्चे का इलाज किया, जिससे उसकी टांग को बचाया जा सका। बच्चे के इलाज के लिए एक अनुभवी डॉक्टरों की टीम बनाई गई, जिसमें शामिल थे।

पंजाबी भाषा में महिला साहित्यकारों के योगदान विषय पर संगोष्ठी का आयोजन

शकुन टाइम्स संवाददाता

लखनऊ । अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर उत्तर प्रदेश पंजाबी अकादमी तथा शिया पी0 जी0 कालेज लखनऊ के संयुक्त तत्वाधान में पंजाबी भाषा में महिला साहित्यकारों के योगदान विषय पर गोष्ठी का आयोजन हुआ। गोष्ठी में मुख्य वक्ता के रूप में बालते हुये शिया पी0जी0 कालेज लखनऊ के डॉ0 प्रदीप शर्मा ने कहा कि साहित्य केवल समाज का आईना नहीं है वरन वो समाज को दिशा देने का काम भी करता है। पंजाबी साहित्य में मौखिक साहित्य से लेकर वर्तमान दौर तक का सफरनामा इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि पंजाबी साहित्य की महिला साहित्यकारों ने सामाजिक वर्जनाओं, महिला उत्पीड़न, पितृसत्ता, दासता, भावनात्मक द्वंद पर अपने लेखन से गम्भीर चोट दी हैं। गोष्ठी की शुरूआत जफर मेंहदी

द्वारा तिलावते कुरआन से हुयी। इसके बाद उत्तर प्रदेश पंजाबी अकादमी द्वारा शिया पी0जी0 कालेज के प्राचार्य प्रो0 शबीहे रजा बाकरी, उत्तर प्रदेश पंजाबी अकादमी के अरविन्द कुमार मिश्रा, विद्यांत पी0जी0 कालेज से प्रो0 श्रवण कुमार गुप्ता, शिया पी0जी0 कालेज से डॉ0 प्रदीप शर्मा, डॉ0 सीमा राना, डॉ0 अमित कुमार राय को अंगवस्त्र व प्रतीक चिन्ह देकर सम्मानित किया गया। गोष्ठी को सम्बोधित करते हुये डॉ0 सीमा राना ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के इतिहास पर प्रकाश डाला तथा महिला बराबरी के लिये पंजाबी साहित्यकारों के योगदान का वर्णन किया। प्रो0 श्रवण गुप्ता ने अमृता प्रीतम की पिंजर, रसीदी टिकट आदि रचनाओं के हवाले से चेतना को विकसित करने में उनके योगदान को रेखांकित किया। लखनऊ विश्वविद्यालय की हिन्दी विभाग की असिस्टेन्ट प्रोफेसर डॉ0 अनुपम ने रूपेन्द्र कौर के साहित्य की विस्तृत समीक्षा श्रोताओं के समक्ष रखी जिसके आधार पर चेतना के विकास में पंजाबी महिला साहित्यकारों के योगदान को समझा जा सकता है।

लखनऊ पब्लिक कॉलेज, ए-ब्लॉक में किड्स टैलेंट शो एवं अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का आयोजन

लखनऊ। लखनऊ पब्लिक कॉलेज, ए-ब्लॉक, राजाजीपुरम में किड्स टैलेंट शो और अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का भव्य आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में प्लेग्रुप से कक्षा 1 तक के नन्हे छात्रों ने अपनी प्रतिभा का अद्भुत प्रदर्शन किया ।कार्यक्रम की मुख्य अतिथि लखनऊ पब्लिक स्कूल्स एंड कॉलेजेज की मुख्य प्रशासिका एवं पूर्व विधान परिषद सदस्य कांति सिंह रहीं, जबकि विशिष्ट अतिथि निकिता सिंह पटेल, कम्युनिकेशन डिजाइनर, और विशेष अतिथि अनूप सिंह पटेल, अध्यक्ष, जनता दल यूनाइटेड (उत्तर प्रदेश), समाजसेवी एवं व्यवसायी, रहे। विद्यालय की प्रधानाचार्या भारती गोसाईं ने सभी विशिष्ट अतिथियों को शिक्षा और समाज सेवा में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए सम्मानित किया। प्लेग्रुप के बच्चों द्वारा स्वागत गीत, कक्षा 1 के विद्यार्थियों द्वारा मेरा देश भारत विषय पर प्रस्तुति, एलकेजी के बच्चों द्वारा ष्सुरक्षा नियमष्, यूकेजी के छात्रों द्वारा पक्षी।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर अभाविप एवं नेहरू युवा केंद्र संयुक्त तत्वाधान में हुआ संगोष्ठी का आयोजन

शकुन टाइम्स संवाददाता

म्योरपुर/सोनभद। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद सोनभद्र जिला एवं नेहरू युवा केंद्र सोनभद्र संयुक्त तत्वाधान में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर जय प्रकाश नारायण सर्वोदय विद्यालय उरमौरा रॉबर्ट्सगंज में संगोष्ठी का आयोजन किया गया ।इस दौरान सभी छात्राओं में टी शर्ट एवं कैप का वितरण किया गया। मुख्य अतिथि महिला थानाध्यक्ष सविता सरोज, प्रख्यात कवयित्री डॉ. रचना तिवारी, प्रधानाचार्य डॉ. कल्पना सिन्हा उपस्थित रही। महिला थानाध्यक्ष ने सभी छात्राओं को वर्तमान समय की स्थिति के बारे में बताया की किस प्रकार से अपराध बढ़ रहा है और महिलाओं को उसे किस प्रकार से निपटने की आवश्यकता है ।उन्होंने

सभी छात्राओं को सरकार द्वारा चलाई जा रही समस्त योजनाओं के बारे में बताया एवं आत्म सुरक्षा के टिप्स दिए एवं सभी हेल्पलाइन नंबरों के बारे में भी जानकारी दिया। प्रख्यात कवयित्री डॉ रचना तिवारी ने बताया कि आज के युग में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है महिला हर जगह अपने विजय का परचम लहरा रही हैं देश के समस्त बड़े पदों एवं महत्वपूर्ण पदों पर महिलाएं आसीन हैं। भारत की राष्ट्रपति भी महिला हैं उन्होंने भ्रूण हत्या के रोक हेतु सभी से आग्रह करते हुए जानकारी दिया और काव्य पंक्तियों से सभी को उत्साहित किया। विद्यालय की प्रधानाचार्य डॉक्टर कल्पना सिंह ने सभी का धन्यवाद ज्ञापित किया। विभाग संगठन मंत्री विवेक ने संगठन के बारे में सभी छात्र- छात्राओं को जानकारी दिया। इस दौरान प्रदेश कार्य समिति सदस्य अनमोल सोनी, जिला संयोजक मृगांक दुबे, नगर सह मंत्री धर्मेश पांडे आदि उपस्थित रहे।

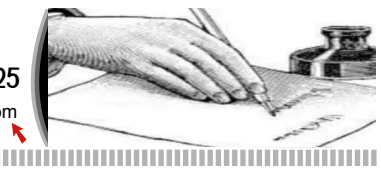

सम्पादकीय

अंतरराष्ट्रीय महिला दिवसः क्या शहरी बस्तियों तक पहुंच पाएगा महिला सशक्तिकरण

साल 2025 का अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस तेजी से कार्रवाई करें की थीम के साथ हमें याद दिलाता है कि महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में तत्काल और प्रभावी कदम उठाने की जरूरत है। शहरी बस्तियों में रहने वाली महिलाएं अपने अधिकारों, सुरक्षा और सपनों के लिए संघर्षरत हैं, लेकिन वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति और समाज एवं परिवार की बेरुखी उनके जीवन को ज्यादा कठिन बना देती है। बड़े महानगरों सहित मेट्रो सिटी के रूप में विस्तार पा चुकी शहरी बस्तियों में रहने वाली महिलाओं की जिंदगी की सच्चाई को अगर करीब से देखा जाए, तो यह साफहो जाता है कि उनकी समस्याएं केवल गरीबी और संसाधनों की कमी तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह असमानता, भेदभाव, पलायन और सामाजिक एवं राजनीतिक उपेक्षा की गहरी जड़ों से भी जुड़ी हुई हैं। ऐसी स्थिति में, साल 2025 का अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस श्तेजी से कार्रवाई करें की थीम के साथ हमें याद दिलाता है कि महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में तत्काल और प्रभावी कदम उठाने की जरूरत है। शहरी बस्तियों की अधिकांश आबादी ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन करके आती है। छोटे शहरों एवं राज्यों की राजधानियों की कमोबेश यही स्थिति है। महानगरों में पलायन गांवों के साथ-साथ छोटे शहरों से भी होता है। पिछले कुछ दशकों में ग्रामीण एवं छोटे शहरों में रोजगार के अभाव ने पलायन को तेज किया है। गांवों में आज भी छुआछूत है, जिसकी वजह से दलित समुदाय पलायन कर शहरी बस्तियों में आ रहा है। इसलिए बस्तियों की कुल आबादी में एक बड़ा हिस्सा दलित एवं आदिवासी समुदायों का होता है। कुछ परिवार अपने बच्चों को बेहतर शिक्षा दिलाने के लिए शहरों का रुख करते हैं। यह सिलसिला दशकों से चल रहा है, जिसकी वजह से शहरी बस्तियों में रहने वाले परिवार पीढ़ी दर पीढ़ी के साथ-साथ हाल के वर्षों में आए परिवार भी हैं। इन बस्तियों में रह रहे बहुत कम परिवार हैं, जो अपनी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को बेहतर कर कॉलोनियों की तरफ चले गए। अधिकांश परिवार इन्हीं बस्तियों में स्थायी रूप से रहने लगे हैं। इन बस्तियों में पानी की किल्लत, शौचालयों की कमी, सुरक्षित सार्वजनिक स्थानों का अभाव, स्वास्थ्य एवं शिक्षा का अभाव जैसे कई गंभीर मुद्दे हैं। महिलाएं इन समस्याओं से सबसे ज्यादा जूझ रही हैं। इनकी वजह से उनके जीवन पर नकारात्मक असर पड़ता है। शहरी बस्तियों में हाल ही में पलायन करके आए परिवारों और वर्षों से रहने वाले परिवारों के बीच भी अक्सर सामाजिक और सांस्कृतिक संघर्ष देखने को मिलता है। विभिन्न राज्यों और भाषाई पृष्ठभूमियों से आने वाले परिवारों के बीच संसाधनों को लेकर टकराव, परंपराओं और जीवनशैली में मतभेद की वजह से अक्सर असहमति और तनाव उत्पन्न होते हैं।

इस संघर्ष का सबसे अधिक बोझ महिलाओं को उठाना पड़ता है, क्योंकि उन्हें ही पारिवारिक समायोजन और सामाजिक मेलजोल को बनाए रखने की जिम्मेदारी निभानी पड़ती है। कई बार नई बस्तियों में हाल ही में आई महिलाएं स्थानीय भाषा न जानने के कारण सरकारी योजनाओं और समुदाय आधारित सहायता समूहों तक नहीं पहुंच पातीं, जिससे वे और भी ज्यादा हाशिए पर चली जाती हैं। आर्थिक संकटों से जूझ रहे इन परिवारों की महिलाएं घरेलू कामगार, सफाई कर्मचारी, छोटे-मोटे कारीगर या असंगठित क्षेत्र की मजदूर होती हैं, जो घर एवं बाहर दोनों ही जगहों पर समस्याओं से जूझ रही हैं। कई महिलाएं घर से दूर काम करने जाती हैं, लेकिन उनके लिए सार्वजनिक परिवहन में सुरक्षा एक बड़ी चिंता का विषय बनी रहती है। कार्यस्थल पर महिलाओं को अक्सर असभ्य व्यवहार का सामना करना पड़ता है। रात के समय इन बस्तियों की गलियां अंधेरे में डूबी रहती हैं, जिससे महिलाओं के लिए घर लौटना खतरे से खाली नहीं होता। शहरी विस्थापन के कारण शहर से दूर फेंक दिए जाने के कारण यह संकट और गहरा हो जाता है। महिलाओं के लिए सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर रोजगार से जुड़े कई प्रशिक्षण दिए जाते हैं, लेकिन उसका कोई फायदा उन्हें नहीं मिल पाता। एक तो बस्ती में स्वरोजगार के अवसर सीमित हैं, दूसरी बात यह कि वे कहीं अन्य जगह जाकर स्वरोजगार कर पाने में असमर्थ होती हैं। बस्ती की ज्यादातर महिलाएं अक्सर अपने स्वास्थ्य और पोषण की अनदेखी कर देती हैं। अधिकांश बस्तियों में सुबह चार बजे उठकर पानी भरने के लिए लंबी कतारों में खड़ा होना महिलाओं की दिनचर्या का हिस्सा है। उनके पास इतना समय ही नहीं बचता कि वे अपने लिए कुछ सोच सकें। बस्ती में स्वास्थ्य सुविधाएं सीमित हैं, और जब कभी वे बीमार पड़ती हैं, तो सरकारी अस्पतालों की भीड़ और लापरवाही उनके लिए एक नई समस्या बन जाती है। शहरी बस्तियों में महिलाओं के लिए शिक्षा भी एक बड़ी चुनौती है। कई लड़कियां किशोरावस्था में ही स्कूल छोड़ देती हैं क्योंकि उनके घरवालों को लगता है कि पढ़ाई की बजाय घर का काम करना और छोटे भाई-बहनों की देखभाल करना ज्यादा जरूरी है। इसके साथ ही बालिकाओं की सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है। कई बालिकाएं घर की आर्थिक स्थिति को देखते हुए कम उम्र से ही मां के साथ काम पर जाने लगती हैं। इसके अलावा, घरेलू हिंसा इन बस्तियों की महिलाओं के लिए एक और गंभीर समस्या है। पुलिस में शिकायत दर्ज कराना आसान नहीं होता और अगर कोई महिला हिम्मत करके शिकायत कर भी देती है, तो समाज और परिवार का दबाव उसे वापस उसी प्रताड़ना भरी जिंदगी में धकेल देता है। कई महिलाओं को यह भी नहीं पता होता कि उनके लिए कानूनी मदद और सहायता समूह उपलब्ध हैं।

बुच के जाते ही सेबी में सफाई अभियान शुरू हो

जगदीश रत्तनानी

तीन वर्ष के कार्यकाल की समाप्ति के बाद माधबी पुरी बुच को सेबी से बाहर निकलने की अनुमति दी गयी है। यह स्वागत योग्य निर्णय है। तीन साल पूर्ण होने के बाद कार्यकाल बढ़ाया जा सकता है और ऐसा अक्सर हुआ है लेकिन बुच के मामले में समस्याओं के पिटारे पर ढक्कन लगाने का यह एक शालीन तरीका था। यह अलग बात है कि बुच की विदाई का मामला शेयर लिस्टिंग में कथित निष्क्रियता तथा मिलीभगत के एक और विवाद में उलझा हुआ था जो उनके कार्यभार संभालने से पहले का था। उस विवाद से विचलित हुए बिना यह कहा जा सकता है कि भारत की प्रतिभूति बाजार पर निगरानी रखने वाली संस्था की पहली महिला प्रमुख विवाद के बादलों में घिरे होने के साथ सेवानिवृत्त हो रही हैं, जिन्होंने सेबी के भीतर से आलोचना को आमंत्रित किया और जिनके नेतृत्व वाली संस्था की विश्वसनीयता एवं प्रतिष्ठा के बारे में बहुत सारे सवाल छोड़ गईं। सेबी तभी काम कर सकता है जब उसे स्वतंत्रता और ईमानदारी के साथ काम करने दिया जाए। इस भरोसे के बिना भारत के प्रतिभूति बाजारों के गर्म और अक्सर अस्थिर स्थान को नियंत्रित करने के इसके प्रयासों में दृढ़ विश्वास नहीं हो सकता। इस भरोसे का यह नुकसान इस कार्यकाल की सबसे बड़ी छाप बना रहेगा। जब पहली बार हिंडनबर्ग के आरोपों का झटका सेबी और बुच को लगा तो इस तूफान में फंसी माधबी और उनके पति धवल बुच ने अपनी शैक्षणिक योग्यता दिखाकर औपचारिक स्पष्टीकरण जारी किया था।

इसमें बताया गया था कि माधबी आईआईएम अहमदाबाद की पूर्व छात्रा हैं जबकि धवल आईआईटी दिल्ली से स्नातक हैं। जिन आरोपों के बारे में उक्त स्पष्टीकरण जारी किया गया, उन आरोपों के संदर्भ में बुच दम्पति की पढ़ाई-लिखाई को जनता कितना प्रतिष्ठापूर्ण मानती है, यह एक महत्वपूर्ण बात है। हालांकि इसे देखने के कई तरीके हैं। स्पष्ट रूप से हाईलाइट की गई डिग्री जनता से यह पूछने के लिए है कि बताइये कि हमारे जैसे उच्च विद्या विभूषित व्यक्ति को देखने के बाद आपको क्योंकर लगता है कि हमने कुछ गलत किया है? क्या आप जानते हैं कि हम किस वर्ग से आते हैं?... वगैरह। भारत में कई किस्से-कहानियों व्हाट्सएप के जरिए बेचा जाता है। हाल के वर्षों में इस बात का बाजार किया गया है कि हमारी अर्थव्यवस्था इस समय राजनीतिक व्यवस्था के शीर्ष पर निर्मित कई रंगों, स्वादों और संस्करणों के लिए गर्जना कर रही है, और कुछ कृपापात्र हैं जो एक जैसे सामानों का व्यापार करते हैं। इनमें से कोई भी बुच के बारे में निर्णय पारित करने के लिए नहीं है लेकिन यह एक अंतर्निहित विश्वास प्रतीत होता है कि जो जनता को आकर्षक रैपर में लपेटी हुई वस्तु खरीदने के लिए प्रेरित करने और यहां तक कि जश्न मनाने के लिए भी है। इस जटिल मामले में कुछ मुद्दे सामने नहीं आते हैं। पहला यह है कि तकनीकी अनुपालन का निम्न मार्ग सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी के उच्च मार्ग से बहुत अलग है। भले ही बुच के मामले में बचाव को वैध माना जाए लेकिन बुच-अदानी के उलझाव को भूलकर उनका बचाव सबसे अच्छा यह रहा है कि तकनीकी अनुपालन कैसे हासिल किया गया और उपयुक्त बक्से को कैसे टिक किया गया। सच्चाई जानने के लिए नए सिरे से जांच की आवश्यकता है जैसे कि आईसीआईसीआई बैंक में बुच की पूर्व सहयोगी चंदा कोचर के मामले में वास्तव में जरूरी थी। चंदा कोचर को पहले

इसमें बताया गया था कि माधबी आईआईएम अहमदाबाद की पूर्व छात्रा हैं जबकि धवल आईआईटी दिल्ली से स्नातक हैं। जिन आरोपों के बारे में उक्त स्पष्टीकरण जारी किया गया, उन आरोपों के संदर्भ में बुच दम्पति की पढ़ाई-लिखवाई को जनता कितना प्रतिष्ठापूर्ण मानती है, यह एक महत्वपूर्ण बात है। हालांकि इसे देखने के कई तरीके हैं। स्पष्ट रूप से हाईलाइट की गई डिग्री जनता से यह पूछने के लिए है कि बताइये कि हमारे जैसे उच्च विद्या विभूषित व्यक्ति को देखने के बाद आपको क्योंकर लगता है कि हमने कुछ गलत किया है? क्या आप जानते हैं कि हम किस वर्ग से आते हैं?... वगैरह। भारत में कई किस्से-कहानियों व्हाट्सएप के जरिए बेचा जाता है। हाल के वर्षों में इस बात का बाजार किया गया है कि हमारी अर्थव्यवस्था इस समय राजनीतिक व्यवस्था के शीर्ष पर निर्मित कई रंगों, स्वादों और संस्करणों के लिए गर्जना कर रही है।

आवश्यक रूप) से उनकी सुपर-रिच स्थिति को प्रतिबिंबित करेंगे। यह सच है कि कुछ भत्ता दिया जाना चाहिए पर यह भी उतना ही सच है कि शक्ति और कनेक्शन नए अवसर बनाते हैं जो जानबूझ कर ओढ़े गए अंधेपन के साथ अच्छी तरह से काम करते हैं। इसके अलावा एक लोकतांत्रिक राष्ट्र को यह भी पूछना चाहिए कि ऐसी पृष्ठभूमि क्या विशिष्ट योग्यता या कथित अनुपालन के आधार पर क्लीन चिट दी गई थी और फिर भारत के उस समय के सबसे बड़े निजी क्षेत्र के बैंक में गड़बड़ी का खुलासा न्यायमूर्ति बीएन श्रीकृष्ण ने किया था जिसके बाद कोचर को बर्खास्त कर दिया गया था। बुच के मामले में इसी तरह की जांच के बिना, कैसे और क्यों रियल एस्टेट इन्वेस्टमेंट ट्रस्ट फंड को सेबी द्वारा आक्रामक रूप से बढ़ावा दिया गया, कैसे बुच के पति के नियोक्ता ब्लैकस्टोन ने इनसे लाभ कमाया और क्यों सेबी ने अदानी समूह की जांच नहीं की? यह सब अनुपालन की रिपोर्टों में दबकर रह जाएगा। इसका मतलब यह नहीं है कि बुच द्वारा प्रवर्तित आरईआईटी के माध्यम से आवास बाजारों के वित्तीयकरण की वांछनीयता और समझदारी पर अन्य प्रश्न पूछे जाएं तथा यह भी कि वे संपत्ति बाजार और आम नागरिकों को कैसे प्रभावित करते हैं। सरकार को उम्मीद हो सकती है कि बुच की सेवानिवृत्ति से ये सारे मामले शांत हो जाएंगे लेकिन इस मामले में किसी न किसी दिन पूरी जांच की आवश्यकता होगी। दूसरा यह तर्क है कि निजी क्षेत्र के खिलाड़ी जिन्होंने उच्च वेतन, कर्मचारी स्टॉक स्वामित्व योजना (इम्प्लाई स्टॉक ओनरशिप प्लॉन- ईएसओपी के तहत कंपनी अपने कर्मचारियों को कंपनी के शेयर देती है। इससे कर्मचारियों को कंपनी में हिस्सेदारी मिलती है) और कंपनी से मिले बोनस पर जीवन व्यतीत किया है, निश्चित रूप से उच्च आय वाले व्यक्ति होंगे तथा उनके निवेश एवं होल्डिंग और जीवन शैली नियामक अनुभव लाती है? इस सवाल को भारत में बढ़ती प्रवृत्ति के खिलाफतौलना होगा जो सत्ता के लीवर को अति-धनी और जुड़े हुए लोगों को सौंपने के लिए है, लगभग एक नियंत्रित क्लब गठित करता है जो एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। यह नए भारत में प्रतिभा के आधार पर काम करने वाली योग्यता (मेरिटॉक्रसी) के बजाय एक धनिकतंत्र (प्लूटोक्रेसी) है। इन तथाकथित स्टार कलाकारों की सही कीमत और उनके योगदान का वास्तविक मूल्यांकन अपने आप में एक अलग चर्चा का विषय है। दुनिया को उनकी स्व-घोषित प्रतिभा तथा अशिष्ट विचारों या उच्च उपलब्धि के उनके मार्करों को खरीदने की जरूरत नहीं है। तीसरी बात यह है कि सेबी का कोई भी अध्यक्ष भारत की आज की वास्तविकता में अदानी जैसे शक्ति केंद्र के खिलाफकार्रवाई करने की बात तो दूर उसके बारे में बात भी नहीं कर सकता। वास्तव में यह आज की राजनीतिक सचाई है और संस्थानों के अपमानों के रूप में इसका टोल भरा जा रहा है। लेकिन यहां तो चेयर पर ही यह खेल खेलने का आरोप लगाया जा रहा था। व्यावसायिकता की उच्च गुणवत्ता के बजाय यह कनेक्शन और कवर-अप के लिए उच्च अंक मांग रहा है। कुछ चुनिंदा लोगों के लिए नियामक और विनियमित के बीच की दूरी मिट गई है। सवाल उठता है कि वास्तव में ये नियुक्तियां कौन करता है व ये नियुक्तियां संस्थान को कैसे मजबूत करती हैं।

अभिव्यक्ति का हक

यह विडंबना ही है कि आजादी के पिचहत्तर साल बाद भी शीर्ष अदालत को याद दिलाना पड़ा है कि संविधान प्रदत्त अभिव्यक्ति की आजादी अनिवार्य हक है। यह भी कि हमारी पुलिस अब तक स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मर्म नहीं समझी है और अकसर राजनीतिक दबाव में कार्यवाही कर देती है। कमोबेश यही स्थिति सत्ता पक्ष की भी है कि वो अपनी आलोचना पर तल्ख होकर अभिव्यक्ति की आजादी का अतिक्रमण करने पर उतारू हो जाता है। ऐसे मामलों में पुलिस का भी दायित्व बनता है कि अभिव्यक्ति की सही व्याख्या करे। उसके बाद ही किसी तरह की कार्रवाई करे। निश्चय ही ऐसे मामलों में बेहद संवेदनशीलता की जरूरत होती है। वहीं दूसरी ओर हाल के दिनों में किसी राजनेता के बयान, फिल्मों, साहित्यिक अभिव्यक्ति पर भावनाएं आहत होने के आरोप लगाने का फैशन ही बन गया है। दरअसल, कला व साहित्य में अभिव्यक्ति बिंबों व प्रतीकों के माध्यम से की जाती है। जिसकी सतही व्याख्या करके आनन-फानन में मुकदमे दर्ज कर दिए जाते हैं। भारतीय समाज की तो सदियों से यह खूबसूरती ही रही है कि सभी विचारों व तर्कों का सम्मान किया जाता रहा है। लेकिन हाल के सोशल मीडिया के दौर में कथित भावना आहत होने के आरोप लगाने का रिवाज सा बन गया है। इसके विपरीत सत्ता पक्ष को सुविधाजनक लगने वाले तल्ख विचारों की अभिव्यक्ति का नोटिस नहीं लिया जाता। विडंबना यह है कि पुलिस भी सत्ता पक्ष के दबाव के चलते न्यायसंगत कार्रवाई नहीं कर पाती। यही वजह है कि पिछले दिनों सांसद इमरान प्रतापगढ़ी की कविता पर प्राथमिकी दर्ज होने तथा अश्लील अभिव्यक्ति करने वाले रणवीर इलाहाबादिया के प्रकरण में सुप्रीम कोर्ट ने मार्गदर्शक टिप्पणियां की। इसमें प्रतापगढ़ी की कविता का मर्म समझे बिना उसके खिलाफप्राथमिकी दर्ज करने की कड़ी आलोचना की गई। साथ ही शीर्ष अदालत ने सरकारी दिशा-निर्देशों में स्वतंत्र अभिव्यक्ति की गरिमा का ध्यान रखने को भी कहा, जिससे किसी के साथ अन्याय न हो सके। निस्संदेह, अदालत ने स्वतंत्र अभिव्यक्ति के लोकतांत्रिक व संवैधानिक मूल्यों के रूप में अपरिहार्य होने का जिक्र करते हुए दोटूक शब्दों में कहा कि कम से कम आजादी के सात दशक बाद पुलिस को इसकी गरिमा का अहसास होना चाहिए था।

कोर्ट ने नसीहत दी कि प्रतापगढ़ी के खिलाफमामला दर्ज करने से पहले पुलिस को कविता पढ़नी चाहिए थी और उसका वास्तविक अर्थ समझना चाहिए था। कविता इंसाफऔर प्रेम को अभिव्यक्त करती थी, न कि हिंसा-दुर्भावना को। कोर्ट ने ऐसी ही टिप्पणी डिजिटल प्लेटफार्म के एक कार्यक्रम में भदेस-अश्लील शब्दावली का प्रयोग करने वाले रणवीर इलाहाबादिया को फिर से कार्यक्रम की अनुमति देते वक्त की है। कोर्ट ने चेताया कि अभिव्यक्ति की आजादी के मायने अश्लील अभिव्यक्ति कदापि नहीं है। कोर्ट ने इलाहाबादिया को सख्त लहजे में चेताया कि अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर वे नैतिकता व अश्लीलता की सीमाओं के अतिक्रमण करने का दुस्साहस कदापि न करें। अदालत ने सोशल मीडिया मंचों के दुरुपयोग पर गहरी चिंता जताते हुए कहा कि सरकार इस बाबत दिशा-निर्देश जारी करे ताकि सेंसर करने तथा मापदंडों का फर्क स्पष्ट हो सके, जिससे आनन-फानन में विचारों की स्वतंत्रता पर अनावश्यक अंकुश न लगाया जा सके। निस्संदेह, आजकल जब सोशल मीडिया के कतिपय मंचों पर असामाजिक व्यवहार मर्यादाओं की सीमा लांघना आम होता जा रहा है, इनका गाइडलाइन्स के जरिये नियमन जरूरी हो जाता है। लेकिन पुलिस-प्रशासन को जल्दबाजी में कार्रवाई करने के बजाय संवेदनशील ढंग से चीजों का अवलोकन करना चाहिए। यह जानते हुए कि किसी भी लोकतंत्र में नागरिकों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति एक अपरिहार्य शर्त है। वैसे अभिव्यक्ति की आजादी को लेकर शीर्ष अदालत की यह टिप्पणी पहली बार नहीं आई। स्वतंत्र अभिव्यक्ति को लेकर कई बार मंथन भी होते हैं। लेकिन पुलिस-प्रशासन की कार्रवाई में आवश्यक संजीदगी नजर नहीं आती। यही वजह है कि अदालतों में भावनाओं के आहत होने वाले कथित मामले लगातार आते ही रहते हैं।

जबकि अधिकांश मामलों में राजनीतिक व धार्मिक दुराग्रह देखने को मिलते हैं। कई लोग बड़े लोगों के खिलाफमुकदमा दर्ज करवाकर चर्चा में आने का मौका तलाश लेते हैं। निस्संदेह, पुलिस-प्रशासन की संवेदनशीलता व सत्ता की उदारता से ही अभिव्यक्ति की आजादी की गरिमा रक्षित होगी। इसके अलावा महत्वपूर्ण यह भी है कि जिम्मेदार नागरिक के तौर पर हम अपनी अभिव्यक्ति की आजादी की रक्षा के प्रति सचेत रहें। हमारी उदासीनता समाज में निहित स्वार्थी तत्वों को मनमानी का अवसर देती है। स्वतंत्र अभिव्यक्ति के लिये बनाया गया जनता का दबाव सत्ता व पुलिस-प्रशासन को मनमानी करने से रोकता है।

क्रूर एवं आक्रांता मुगल शासक हमारे आदर्श कैसे

समाजवादी पार्टी के नेता अबू आजमी के बयान ने महाराष्ट्र की राजनीति में उबाल ला दिया है एवं देश के बहुसंख्य समाज की भावनाओं को आहत किया है। भारत में आज भी एक ऐसा वर्ग है जो इस्लामिक कट्टरता के साथ जुड़ने में गर्व एवं गौरव की अनुभूति करता है, भले ही इससे देश की एकता एवं अखण्डता क्षत-विक्षत होती हो। इस्लाम के नाम पर जिसने हजारों हिंदू मंदिरों को ध्वस्त किया, तलवार की नोक पर बड़ी संख्या में लोगों को जबरन मुसलमान बनाया, ऐसे क्रूर एवं सांप्रदायिक शासक औरंगजेब को नेकदिल और महान शासक बताना, आखिर किस तरह की सोच है? भारत के अतीत को जघन्य अपराधों, कट्टरतावादी सोच एवं यातनाओं से सींचने वाले मुगल शासकों के प्रति यह कैसा मोह एवं ममत्व है।

ललित गर्ग

फिल्म 'छावा' कोरी फिल्म ही नहीं, हिन्दुओं को संगठित करने का अभियान है, जिसने औरंगजेब के क्रूर एवं बर्बर चरित्र को प्रस्तुत किया है, यह फिल्म मराठा साम्राज्य के दूसरे शासक और छत्रपति शिवाजी महाराज के बड़े बेटे संभाजी महाराज की जिंदगी पर आधारित है। मुगल बादशाह औरंगजेब की क्रूरता, अत्याचार एवं यातनाएं एक बार फिर बॉलीवुड की फिल्म छावा के कारण सुर्खियों में है। इस बार मामला सिर्फ इतिहास के पन्नों तक सीमित नहीं है बल्कि राजनीति में भी गर्मा गया है।

समाजवादी पार्टी के नेता अबू आजमी के बयान ने महाराष्ट्र की राजनीति में उबाल ला दिया है एवं देश के बहुसंख्य समाज की भावनाओं को आहत किया है। भारत में आज भी एक ऐसा वर्ग है जो इस्लामिक कट्टरता के साथ जुड़ने में गर्व एवं गौरव की अनुभूति करता है, भले ही इससे देश की एकता एवं अखण्डता क्षत-विक्षत होती हो। इस्लाम के नाम पर जिसने हजारों हिंदू मंदिरों को ध्वस्त किया, तलवार की नोक पर बड़ी संख्या में लोगों को जबरन मुसलमान बनाया, ऐसे क्रूर एवं सांप्रदायिक शासक औरंगजेब को नेकदिल और महान शासक बताना, आखिर किस तरह की सोच है? भारत के अतीत को जघन्य अपराधों, कट्टरतावादी सोच एवं यातनाओं से सींचने वाले मुगल शासकों के प्रति यह कैसा मोह एवं ममत्व है? हिन्दू धर्म एवं संस्कृति पर आक्रमण करने वाले हमारे आदर्श कैसे

हो सकते हैं? भारत की सांस्कृतिक विरासत एवं समृद्धि को कुचलने वाले महान् शासक कैसे हो सकता है? इन प्रश्नों को लेकर देशभर में छिड़ी बहस हमें आत्मावलोकन एवं मंथन का अवसर दे रही है। फिल्म 'छावा' कोरी फिल्म ही नहीं, हिन्दुओं को संगठित करने का अभियान है, जिसने औरंगजेब के क्रूर एवं बर्बर चरित्र को प्रस्तुत किया है, यह फिल्म मराठा साम्राज्य के दूसरे शासक और छत्रपति शिवाजी महाराज के बड़े बेटे संभाजी महाराज की जिंदगी पर आधारित है। फिल्म में संभाजी के साहस, बलिदान और औरंगजेब के अत्याचारों को दिखाया गया है। संभाजी को औरंगजेब ने छलपूर्वक 1689 में क्रूरता से मरवा दिया था, जिसे फिल्म में भावनात्मक ढंग से पेश करने की सफल एवं सार्थक कोशिश हुई है। इस फिल्म में समाजवादी पार्टी के नेता और महाराष्ट्र विधायक अबू आजमी ने इतिहास को गलत ढंग से पेश करने का आरोप लगाते हुए औरंगजेब की तारीफ करके विवाद को और हवा दे दी। आजमी ने कहा, औरंगजेब क्रूर शासक नहीं था। उसने कई मंदिर बनवाए और उसके शासन में भारत सोने की चिड़िया था। आजमी ने यह भी दावा किया कि औरंगजेब और संभाजी के बीच की लड़ाई धार्मिक नहीं, बल्कि सत्ता की थी। इस तरह मुगल आक्रांताओं की तारीफ करना सपा के डीएनए में है। हो सकता है आजमी का यह औरंगजेब प्रेम एवं मुस्लिम कट्टरतावादी सोच हो, लेकिन औरंगजेब ने संभाजी महाराज को 40 दिनों तक जो यातनाएं दीं, वह क्या थी? उनकी आंखें निकाली गईं, जीभ काटी गई, उनके शरीर को लहूलुहान करके उस पर नमक छिडका और फिर उनकी हत्या कर दी गई, इस तरह क्रूरता एवं बर्बरता बरतने वाले शासक को कैसे आदर्श कहा जाये? असंख्य महिलाओं एवं बच्चों पर अत्याचार करना, जबरन धर्म परिवर्तन कराना, हिन्दू मन्दिरों को तोड़ना, देश की समृद्धि का गलत उपयोग करना कैसे प्रेरणास्पद हो सकता है औरंगजेब पोत राज्यों, राजपूताना और मराठा शासकों के परिवारों का अपहरण कर लेता था और उन्हें बंधक बना लेता था। ताकि वह निर्विरोध शासन करते हुए सम्पूर्ण भारत पर आधिपत्य कर सके। उसने सभी गैर-मुस्लिम प्रजा और पोत राज्यों से धार्मिक असहिष्णुता कर जज़िया वसूला। औरंगजेब एक असहिष्णु, क्रूर एवं कट्टरपंथी था और उसकी कट्टरता के कारण करोड़ों लोगों को कष्ट सहना पड़ा। शांति और बहुसंस्कृतिवाद की भूमि भारत में ऐसे अत्याचारी को आदर्श नहीं बनाया जाना चाहिए। यह पहली बार नहीं है जब औरंगजेब जैसे मुगल शासकों के प्रति प्रेम का प्रदर्शन उमड़ा हो, जब दिल्ली की एक सड़क का नाम औरंगजेब रोड से बदलकर एपीजे अब्दुल कलाम के नाम पर रखा गया था, तब भी बहुत हाय-तौबा मचाई गयी थी। उस समय भी अनेक लोगों ने औरंगजेब को महान शासक बताया था। जबकि इतिहासकारों ने भी दर्ज किया है छल से छत्रपति संभाजी को पकड़ने के बाद औरंगजेब ने अत्याचार एवं अमानवीयता की सभी हद पार करते हुए जुल्म किए। औरंगजेब छत्रपति संभाजी को इस्लाम कबूल करने के लिए मजबूर कर रहा था लेकिन छत्रपति ने सब प्रकार के कष्ट सहे लेकिन इस्लाम कबूल नहीं किया।

दिल्ली कैपिटल्स प्लेऑफ का सपना धूमिल

गुजरात जायंट्स ने कांटे के मुकाबले में पांच विकेट से दी मात

एजेंसी

लखनऊ। गुजरात जायंट्स ने हरलीन देओल (नाबाद 70 रन) के अर्धशतक से शुक्रवार को यहां महिला प्रीमियर लीग (डब्ल्यूपीएल) के रोमांचक मैच में दिल्ली कैपिटल्स के खिलाफ तीन गेंद रहते पांच विकेट से जीत दर्ज कर खुद को प्लेऑफ की दौड़ में बरकरार रखा। यह गुजरात जायंट्स की लगातार तीसरी जीत है जिससे वह आठ अंक लेकर तालिका में दूसरे स्थान पर पहुंच गई है और प्लेऑफ की दौड़ में कायम है। दिल्ली कैपिटल्स के 10 अंक हैं। दिल्ली कैपिटल्स के लिए कप्तान मेग लैनिंग ने 57 गेंद में 15 चौके और एक छक्के से 92 रन बनाये।

उन्होंने और सलामी बल्लेबाज शेफाली वर्मा (40 रन,27 गेंद, तीन चौके, तीन छक्के) ने महज नौ ओवर के अंदर तेजी से पहले विकेट के लिए 83 रन की साझेदारी कर धमाकेदार शुरूआत कराई जिससे टीम ने पांच विकेट पर 177 रन का प्रतिस्पर्धी स्कोर खड़ा किया। इस लक्ष्य का पीछा करने उतरी गुजरात जायंट्स 19.3 ओवर में पांच विकेट पर 178 रन ही बनाकर जीत दर्ज की। हरलीन के अलावा बेथ मूनी की 44 रन की पारी भी अहम रही। अंत में कप्तान एशले गार्डनर (13 गेंद में 22 रन) और डायंड्रा डोटिन (10 गेंद में 24 रन) ने तेजी से रन जुटाकर टीम को लक्ष्य के करीब पहुंचाया।

गुजरात की टीम ने दूसरे ही ओवर में सलामी बल्लेबाज दयालन हेमलता (01) का विकेट गंवा दिया। लेकिन विकेटकीपर और सलामी बल्लेबाजमूनी (35 गेंद, छह चौके) और हरलीन देओल (49 गेंद, नौ चौके, एक छक्का) ने 57 गेंद में दूसरे विकेट के लिए 85 रन की साझेदारी निभाई। मीनू मणि ने 12वें ओवर में मूनी का विकेट झटक लिया। पर हरलीन ने आक्रामकता से खेलना जारी रखा। उन्होंने कप्तान एशले गार्डनर के साथ तीसरे विकेट के लिए 25 गेंद में 39 रन और डायंड्रा डोटिन के साथ चौथे विकेट के लिए 14 गेंद में 34 रन की साझेदारी निभाई जिससे टीम लक्ष्य के करीब पहुंची। डोटिन ने 18वें ओवर में जेस जोनाथन पर दो चौके और एक छक्का जड़ दिया। पर इसी गेंदबाज ने डोटिन और फोबे लिचफील्ड को लगातार गेंदों पर आउट कर दिया। लेकिन डोटिन के 10 गेंद में दो चौके और दो छक्के ने गुजरात जायंट्स की मुश्किल आसान कर दी। इससे अब दो ओवर में 16 रन की जरूरत थी और काशवी गौतम ने 19वें ओवर की अंतिम गेंद पर छक्का जड़ दिया। जिससे अंतिम ओवर में जीत के लिए सात रन चाहिए थे और हरलीन ने आसानी से ये रन जुटा लिए। इससे पहले बल्लेबाजी का न्योता मिलने के बाद दिल्ली कैपिटल्स ने अच्छी शुरूआत की। लेकिन शेफाली नौंवे ओवर में मेघना सिंह की गेंद पर एक और छक्का लगाने के प्रयास में बाउंड्री पर फोबे लिचफील्ड के हाथों कैच आउट हो गईं। पर लैनिंग क्रीज पर डटी रहीं और आक्रामक इरादे के साथ बल्लेबाजी जारी रखीं। दिल्ली कैपिटल्स ने जेस जोनासन और जेमिमा रोड्रिग्स के विकेट जल्दी गंवा दिए। एनाबेल सदरलैंड (8 गेंद पर 14 रन, दो चौके) ने लैनिंग को कुछ समय के लिए साथ दिया, लेकिन वह भी बड़ा हिट लगाने की कोशिश में पवेलियन पहुंच गईं। लैनिंग अंतिम ओवर में डोटिन की गेंद पर बोल्ड होकर शतक से आठ रन से चूक गईं।

वरुण चक्रवर्ती सीमित ओवरों के क्रिकेट में विश्व स्तरीय गेंदबाज बनने के करीब

मुरली विजय ने की प्रशंसा

एजेंसी

मुंबई। भारत के पूर्व सलामी बल्लेबाज मुरली विजय ने मौजूदा चैंपियंस ट्रॉफी में शानदार प्रदर्शन कर रहे वरुण चक्रवर्ती की जमकर प्रशंसा करते हुए कहा कि कैरम बॉल और फ्लिपर पर अपने नियंत्रण के कारण यह रहस्यमयी स्पिनर विश्व स्तरीय गेंदबाज बनने की राह पर है। चक्रवर्ती ने चैंपियंस ट्रॉफी में अभी तक जो दो मैच खेले हैं उनमें उन्होंने सात विकेट लिए हैं। इनमें न्यूजीलैंड के खिलाफ ग्रुप चरण के मैच में लिए गए पांच विकेट भी शामिल हैं। भारत रविवार को होने वाले फाइनल में न्यूजीलैंड का सामना करेगा जिसमें चक्रवर्ती की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। विजय ने कहा, ''मेरा मानना है कि वह विश्व स्तरीय गेंदबाज है। वह वनडे और टी20 में विश्व स्तरीय गेंदबाज बनने के करीब है क्योंकि बहुत कम ऐसे गेंदबाज है जो पूरे नियंत्रण के साथ कैरम बॉल और फ्लिपर करते हैं। उसे गेंदबाजी करते हुए देखने में आनंद आता है।'' भारत की टी20 टीम के कप्तान सूर्यकुमार यादव ने हाल में कहा था कि चक्रवर्ती अब मानसिक रूप से अधिक मजबूत खिलाड़ी बन गया है और किसी भी तरह की स्थिति में शांत बना रहता है। विजय का मानना है कि यह स्वाभाविक प्रगति है जो अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में नियमित रूप से खेलने से मिलती है।

उन्होंने कहा, ''मेरा मानना है कि यह स्वाभाविक प्रगति है जैसे कि अब मैं बात कर रहा हूं उसमें पहले की तुलना में अधिक लय आ गई है। जिंदगी इसी तरह से आगे बढ़ती है। भारत की तरफ से खेलना हम सभी के लिए विशेष होता है और एक बार जब आपको यह मौका मिलता है तो आप उसका पूरा फायदा उठाना चाहते हो।'' विजय ने कहा, ''आप इन अवसरों का फायदा उठाकर अपना प्रभाव छोड़ना चाहते हो। वरुण ने अपने संक्षिप्त करियर में अभी तक यही किया है। उम्मीद है कि भारतीय क्रिकेट टीम के साथ उसका करियर लंबा चलेगा। मेरी तरफ से उसे शुभकामनाएं। भारत की तरफ से 61 टेस्ट, 17 वनडे और नौ टी20 अंतरराष्ट्रीय मैच खेलने वाले विजय को उम्मीद है कि भारत चैंपियंस ट्रॉफी जीतने में सफल रहेगा। भारत को फाइनल में रविवार को न्यूजीलैंड का सामना करना है। विजय ने कहा, ''ईमानदारी से कहूं तो भारतीय क्रिकेट टीम कई वर्षों से बेहतरीन क्रिकेट खेल रही है और सभी खिलाड़ी फॉर्म में हैं और फिट दिख रहे हैं। (चैंपियंस ट्रॉफी) फाइनल महत्वपूर्ण होने वाला है। मुझे पूरी उम्मीद है कि भारत ट्रॉफी जीतेगा। हमारी टीम अभी तक अजेय रही है और अगर हम चैंपियन बनते हैं तो यह शानदार होगा।

संन्यास ले चुके मोईन अली ने वनडे क्रिकेट को बताया सबसे खराब फॉर्मेट

एजेंसी

नई दिल्ली। इंग्लैंड के पूर्व ऑलराउंडर मोईन अली ने बल्लेबाजों के पक्ष में नियमों की कड़ी आलोचना की जिससे 50 ओवर का प्रारूप खत्म होने की कगार पर पहुंचा जिससे टी20 लीग में 'फ्रीलांस' (स्वतंत्र) खेलने वाले खिलाड़ियों की संख्या बढ़ रही है। मोईन ने इंग्लैंड के लिए 138 वनडे मैच खेले हैं जिसमें उन्होंने 2,355 रन बनाने के अलावा 111 विकेट भी लिए हैं जबकि 68 टेस्ट मैच में उन्होंने 3000 से अधिक रन बनाए हैं और 200 से अधिक विकेट लिए हैं। उन्होंने पिछले साल सितंबर में अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट से संन्यास ले लिया था और वह आगामी इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) में कोलकाता नाइट राइडर्स के लिए खेलेंगे। मोईन ने टॉकस्पोर्ट क्रिकेट से कहा, ''विश्व कप और चैंपियंस ट्रॉफी को छोड़कर यह वनडे प्रारूप लगभग पूरी तरह खत्म हो गया है। यह खेलने के लिए सबसे खराब प्रारूप है और मुझे लगता है कि इसके कई कारण हैं। पहले के समय में पहले पावरप्ले के बाद सर्कल के बाहर पांच क्षेत्ररक्षक हुआ करते थे लेकिन पिछले कुछ साल में यह संख्या चार हो गई है जिससे बीच के ओवरों में बल्लेबाजी करना आसान हो गया है। इतना ही नहीं दो नई गेंदों का इस्तेमाल किया जाता है जो पहले नहीं होता था जिससे रन बनाना भी बहुत आसान हो जाता है। उन्होंने कहा, ''मुझे लगता है कि नियम बहुत खराब हैं।

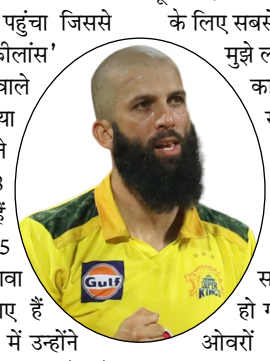

टेबल टेनिस के दिग्गज शरत कमल ने संन्यास का किया ऐलान, 20 साल के करियर को कहा अलविदा

एजेंसी

नई दिल्ली। टेबल टेनिस खिलाड़ी अचंत शरत कमल भी उसी लिस्ट में शामिल हैं। दो शतक से भी लंबे करियर में उन्होंने देश के लिए कई मेडल जीतें। उन्होंने बुधवार को अपने शहर में और अपने करिबियों की मौजूदगी में संन्यासा का ऐलान किया। शरत ने 5 ओलंपिक में भारत का प्रतिनिधित्व किया है।

भारत के महान टेबल टेनिस खिलाड़ी अचंत शरत कमल भी उसी लिस्ट में शामिल हैं। दो शतक से भी लंबे करियर में उन्होंने देश के लिए कई मेडल जीतें। उन्होंने बुधवार को अपने शहर में और अपने करिबियों की मौजूदगी में संन्यासा का ऐलान किया। शरत ने 5 ओलंपिक में भारत का प्रतिनिधित्व किया है। चेन्नई में इसी महीने होने वाला वर्ल्ड टेबल टेनिस स्टार कटेंडर टूर्नामेंट उनका आखिरी टूर्नामेंट होगा। शरत के लिए ये मौका काफी खास है क्योंकि उन्होंने करियर की शुरुआत भी इसी टूर्नामेंट के साथ की थी। डब्ल्यूटीटी प्रतियोगिता यहां 25 से 30 मार्च तक खेली जाएगी। शरत ने कहा कि, मैंने अपना पहला अंतर्राष्ट्रीय टूर्नामेंट चेन्नई में खेला गया था, मैं अपना आखिरी अंतर्राष्ट्रीय मैच भी चेन्नई में ही खेलूंगा। पेशेवर एथलीट के तौर पर ये मेरा आखिरी टूर्नामेंट होगा। 2003 में अपना पहला राष्ट्रीय खिताब जीतने के बाद, उन्होंने रिकॉर्ड तोड़ 10 ये खिताब हासिल किया। 42 साल की उम्र में भी ये खिलाड़ी दुनिया में सबसे ज्यादा रैंक वाले भारतीय पुरुष खिलाड़ी हैं। नई ड्ड्ढञ्ज रैंकिंग के अनुसार, शतर 42वें स्थान पर हैं। 24 वर्षीय मानव ठक्कर से 18 स्थान ऊपर हैं जो अगले सर्वेश्रेष्ठ भारतीय पुरुष खिलाड़ी हैं।

चैंपियंस ट्रॉफी 2025 के शेड्यूल पर भड़के डेविड मिलर

नई दिल्ली। आईसीसी चैंपियंस ट्रॉफी 2025 का फाइनल 9 मार्च को दुबई इंटरनेशनल क्रिकेट स्टेडियम में खेला जाएगा। न्यूजीलैंड ने गुरुवार को दक्षिण अफ्रीका को हराकर चैंपियंस ट्रॉफी के फाइनल में जगह बना ली है, जहां उसका सामना रोहित शर्मा के नेतृत्व वाली भारतीय टीम से होगा। लाहौर में खेले गए दूसरे सेमीफाइनल के दौरान तीन शतक लगे। न्यूजीलैंड के रचिन रविंद्र और केन विलियमसन ने शतक जड़े, जबकि डेविड मिलर ने चैंपियंस ट्रॉफी के इतिहास का सबसे तेज शतक लगाया। हालांकि, सेमीफाइनल गंवाने के बाद मिलर ने आईसीसी को चैंपियंस ट्रॉफी के शेड्यूल को लेकर लताड़ लगाई है। डेविड मिलर इस बात से नाराज हैं कि सेमीफाइनल मुकाबले से पहले अफ्रीका की टीम को दुबई जाना पड़ा और फिर वापस लाहौर आना पड़ा। डेविड मिलर की शतकीय पारी अफ्रीका के काम नहीं आई, क्योंकि टीम 363 रनों के लक्ष्य का पीछा करते हुए 9 विकेट खोकर 312 रन बना सकी।

मलेशियाई पाम ऑयल को बढ़ावा देने के लिए एमपीओसी और ओटीएआई में करार

एजेंसी

मुंबई। भारत और मलेशिया के बीच व्यापारिक सहयोग को मजबूत करने के उद्देश्य से मलेशियाई पाम ऑयल काउंसिल (एमपीओसी) और ऑयल टेक्नोलॉजिस्ट्स एसोसिएशन ऑफ इंडिया (ओटीएआई) ने एक रणनीतिक साझेदारी की घोषणा की है।

एमपीओसी और ओटीएआई ने शुक्रवार को संयुक्त बयान जारी कर कहा कि इस सहयोग के तहत भारतीय बाजार में मलेशियाई पाम ऑयल के पोषण संबंधी लाभों और स्वास्थ्य विशेषताओं को बढ़ावा देने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। भारत को मलेशियाई पाम ऑयल का अहम बाजार मानते हुए, इस साझेदारी का उद्देश्य पाम ऑयल से जुड़ी गलतफहमियों को दूर करना और इसके स्वास्थ्य एवं औद्योगिक उपयोगों को उजागर करना है। यह पहल उपभोक्ता जागरूकता, उद्योग संवाद और वैज्ञानिक अनुसंधान को प्राथमिकता देगी। एमपीओसी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) बेलविंदर स्रॉन ने इस सहयोग की सराहना करते हुए कहा, भारत मलेशियाई पाम ऑयल के लिए एक प्रमुख बाजार बना हुआ है और विज्ञान-आधारित पहलों के माध्यम से जागरूकता बढ़ाना इसकी स्वीकृति को मजबूत करने की कुंजी है। उन्होंने आगे कहा कि ओटीएआई जैसे संगठनों के साथ सहयोग से व्यापक उपभोक्ता वर्ग तक सही जानकारी पहुंचाई जा सकेगी। विशेषज्ञों के अनुसार, पाम ऑयल ट्रांस फैट मुक्त होता है और विटामिन ई एंटीऑक्सीडेंट का समृद्ध स्रोत है। इसमें टोकोफेरोल और टोकोट्रिएनोल्स मौजूद होते हैं, जो हृदय स्वास्थ्य को लाभ पहुंचाते हैं। इसके अलावा पाम ऑयल में संतृप्त और असंतृप्त फैटी एसिड का संतुलित अनुपात होता है, जो समग्र स्वास्थ्य के लिए लाभकारी माना जाता है। ओटीएआई भारत में तेल, वसा, ओलियोकेमिकल्स और सर्फेक्टेंट उद्योग से जुड़े विशेषज्ञों का एक प्रमुख संघ है।

बीओबी ने महिला एनआरआई के लिए लॉन्च किया बचत खाता

एजेंसी

कोलकाता। बैंक ऑफ बड़ौदा (बीओबी) ने पहली बार सार्वजनिक क्षेत्र में विशेष रूप से अप्रवासी भारतीय महिलाओं के लिए 'बॉब ग्लोबल वूमेन एनआरई और एनआरओ' बचत खाता लॉन्च किया है, जिसे उनकी वैश्विक आकांक्षाओं और विशिष्ट बैंकिंग आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए डिजाइन किया गया है। इसके अलावा बैंक ने अपने प्रमुख एनआरआई उत्पाद 'बॉब प्रीमियम एनआरई और एनआरओ' बचत खातों को भी नए स्वरूप में पेश किया है, जिसमें ग्राहकों को बेहतर बैंकिंग अनुभव देने के लिए सुविधाओं और लाभों को उन्नत किया गया है। 'बॉब ग्लोबल वूमेन एनआरई और एनआरओ' बचत खाता कई अनूठे लाभों के साथ पेश किया गया है, जिनमें ऑटो स्वीप सुविधा, जिससे ग्राहकों को अधिक ब्याज अर्जित करने का अवसर मिलेगा, रियायती होम और ऑटो लोन दरें, कम प्रोसेसिंग शुल्क, लॉकर किराए पर 100 प्रतिशत छूट, कस्टमाइज्ड डेबिट कार्ड के साथ मुफ्त घरेलू और अंतरराष्ट्रीय लाउंज एक्सेस और नि:शुल्क व्यक्तिगत एवं हवाई दुर्घटना बीमा शामिल हैं। यह सुविधा प्रदान करने वाला बैंक ऑफ बड़ौदा पहला सार्वजनिक क्षेत्र का बैंक बन गया है। बैंक ऑफ बड़ौदा की कार्यकारी निदेशक बीना वहीद ने कहा कि बैंक ऑफ बड़ौदा एक अंतरराष्ट्रीय बैंक के रूप में अपने एनआरआई ग्राहकों की आकांक्षाओं को समझता है। यह विशेष बचत खाता वैश्विक भारतीय महिलाओं की बदलती जरूरतों को पहचानते हुए उन्हें प्रीमियम बैंकिंग विशेषाधिकार और सुविधाएं प्रदान करता है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर, बैंक ऑफ बड़ौदा महिलाओं की वैश्विक यात्रा में उनके भरोसेमंद बैंकिंग भागीदार बनने के लिए प्रतिबद्ध है।

संक्षिप्त सामाचार

प्रोजेक्ट नमन का 26 नये स्थानों पर विस्तार

नयी दिल्ली। निजी क्षेत्र के बैंक एचडीएफसी बैंक, भारतीय सेना और सीएससी ई-गवर्नेंस ने भारतीय आर्मी के वेटरन्स के निदेशालय (डीआईएवी) के 26 स्थानों पर वेटरन्स को श्रद्धांजलि का विस्तार करने के लिए प्रोजेक्ट नमन समझौता ज्ञापन को नवीनीकृत किया है। प्रोजेक्ट नमन को सेना के दिग्गजों, उनके परिवारों और उनके निकट संबंधियों को सहायता और सेवाएं प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। बैंक ने आज यहां जारी बयान में कहा कि ये सीएससी केंद्र, जो सेना के दिग्गजों या उनके परिवारों या निकट संबंधियों द्वारा संचालित किए जाएंगे, रक्षा प्रतिष्ठानों के भीतर ही उनके दरवाजे पर पेंशन संबंधी सेवाएं, सरकार से नागरिक (जी2सी) सेवाएं और व्यवसाय से उपभोक्ता (बी2सी) सेवाएं प्रदान करने के लिए समर्पित हैं। एचडीएफसी बैंक लिमिटेड , भारतीय सेना के भारतीय सेना के दिग्गजों के निदेशालय (डीआईएवी) और सीएससी अकादमी के बीच एक त्रिपक्षीय समझौता ज्ञापन (एमओयू) का नवीनीकरण किया गया। दूसरे चरण में, परियोजना का विस्तार राजस्थान, पश्चिम बंगाल, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, जम्मू और कश्मीर, मेघालय, बिहार, ओडिशा और नई दिल्ली में 26 डीआईएवी स्थानों तक किया जाएगा। परियोजना के पहले चरण को सितंबर 2023 में 14 डीआईएवी स्थानों पर कॉमन सर्विस सेंटर (सीएससी) की स्थापना के साथ हरी झंडी दिखाई गई थी। एचडीएफसी बैंक अपने परिवर्तन कार्यक्रम के तहत रक्षा सेवा के वेटरन्स और उनके परिजनों के लिए आर्थिक समावेशिता के निर्माण में सहायता करता है। 14 डीआईएवी स्थानों की तरह, नए केंद्र भी वित्तीय उत्पादों और सेवाओं में कौशल विकास और प्रशिक्षण प्रदान करेंगे, जिससे आर्मी वेटरन्स और उनके परिजनों को वित्तीय रूप से स्वतंत्र होने में मदद मिलेगी। सीएससी का प्रबंधन करने वाले व्यक्तियों को शुरुआती 12 महीनों के लिए मासिक मौद्रिक अनुदान का भुगतान किया जाएगा।

सन-डेज़ कंपनी की दो वर्षों में 100 स्टोर शुरू करने की घोषणा

नयी दिल्ली। ब्रांडेड आईवियर उत्पादों का कारोबार करने वाली सन-डेज कंपनी ने शुक्रवार को राजधानी दिल्ली में विस्तार करते हुये अगले दो वर्षों में पूरे देश में 100 स्टोर शुरू करने की घोषणा की है। कंपनी की विपणन निदेशक निहारिका बिनानी ने यहां यह घोषणा करते हुये बताया कि अभी कंपनी के नौ स्टोर हैं और अगले दो वर्षों में सौ स्टोर तक पहुंचाने की योजना है। उन्होंने कहा कि कंपनी के शोरूम में लग्जरी और स्टाइल का बेहतरीन मिश्रण मिलता है। 60 से भी ज्यादा प्रतिष्ठित ग्लोबल ब्रांडों की चुनिंदा और खास पेशकश के साथ चश्मों की एक अद्भुत रेंज जिसमें रे-बैन, प्राडा और गूची जैसे सर्वकालिक ब्रांड्स तो हैं ही, साथ ही आज के समय के ब्रांड्स कूबोरॉम और फिलिप प्लेन भी शामिल हैं के उत्पाद हैं। ये नया स्थान उन सभी चश्मा पसंद करने वालों के लिए एक ऐसी जगह है जहां शालीनता और बेहतरीन डिजाइन के बीच समन्वय देखने मिलेगा। सन-डेज़ कंपनी के पीछे की सोच हिमालय ऑप्टिकल के चौथी पीढ़ी के निदेशक देवांश बिनानी की है, एक ऐसी कंपनी जो पिछले 85 सालों से इस उद्योग में है। उनके नेतृत्व में सन-डेज़ कंपनी ने अपनी समृद्ध विरासत को आज के समय की आधुनिक चश्मों की टेक्नोलॉजी के साथ जोड़ा है, जिससे वे दिल्ली को दे पाए हैं अतुलनीय लग्जरी और स्टाइल का उपहार। हाई फैशन गॉगल्स के अलावा सन-डेज़ कंपनी नज़र के चश्में भी बनाती है।

चार एनबीएफसी पर 76.60 लाख रुपये का जुर्माना

एजेंसी

मुंबई। भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) के निर्देशों के प्रावधानों का पालन न करने पर चार एनबीएफसी रंग दे पी2पी फाइनेंशियल सर्विसेज, फेयरसेट्स टेक्नोलॉजीज इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (जिसे फेयरसेंट भी कहा जाता है), विजनरी फाइनेंसपीयर प्राइवेट लिमिटेड और ब्रिज फिनटेक सॉल्यूशंस प्राइवेट लिमिटेड (जिसे फिनजी भी कहा जाता है) पर 76.60 लाख रुपये का जुर्माना लगाया है।

आरबीआई ने कहा कि उसने रंग दे पी2पी फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड पर 10 लाख रुपये का मौद्रिक जुर्माना लगाया है। कंपनी ने व्यक्तिगत ऋणदाताओं की विशेष मंजूरी के बिना व्यक्तिगत उधारकर्ताओं को ऋण वितरित किया। फेयरएसेट्स टेक्नोलॉजीज इंडिया प्राइवेट लिमिटेड पर व्यक्तिगत ऋणदाताओं की विशेष स्वीकृति के बिना ऋण वितरित करने, संभावित ऋणदाताओं को उधारकर्ताओं के ऋण मूल्यांकन और जोखिम प्रोफ़ाइल का खुलासा न करने और आंशिक रूप से/पूरी तरह से प्रबंधन शुल्क का परित्याग करके आंशिक ऋण जोखिम लेने के लिए 40 लाख रुपये का मौद्रिक जुर्माना लगाया गया है। आरबीआई ने एक बयान में कहा कि कंपनी ने 'फंड ट्रांसफर मैकेनिज्म' पर आरबीआई के निर्देशों का भी पालन नहीं किया, जब उसने किसी विशिष्ट उधारकर्ता से किसी विशिष्ट ऋणदाता को पुनर्भुगतान करने के बजाय नए/मौजूदा ऋणदाताओं द्वारा प्रदान किए गए नए फंड से या उधारकर्ताओं से एकत्रित पुनर्भुगतान के माध्यम से ऋणदाताओं को पुनर्भुगतान की अनुमति दी। आरबीआई ने आरबीआई द्वारा जारी 'गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी - पीयर टू पीयर लेंडिंग प्लेटफॉर्म (रिजर्व बैंक) निर्देश, 2017' के कुछ प्रावधानों का पालन न करने के लिए विजनरी फाइनेंसपीयर प्राइवेट लिमिटेड पर 16.60 लाख रुपये का जुर्माना लगाया है। आरबीआई के अनुसार, कंपनी ने व्यक्तिगत ऋणदाताओं की विशेष स्वीकृति के बिना व्यक्तिगत उधारकर्ताओं को ऋण वितरित किया, और इसने यह सुनिश्चित नहीं किया कि प्रत्येक व्यक्तिगत ऋणदाता और उधारकर्ता ने ऋण समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं; इसने ऋणदाताओं को उधारकर्ताओं के आवश्यक विवरण का खुलासा भी नहीं किया। इसके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के मूल्य निर्धारण के लिए इसके पास बोर्ड द्वारा अनुमोदित नीति नहीं थी, और कंपनी ने, कुछ मामलों में, यह सुनिश्चित नहीं किया कि सेवा प्रदाताओं के साथ इसके समझौतों में आरबीआई के सेवा प्रदाताओं का निरीक्षण करने के अधिकार को मान्यता देने के लिए खंड शामिल हैं।

अहमदाबाद में गोदरेज इंडस्ट्रीज ने 'समागम' प्लेटफॉर्म किया लॉन्च

एजेंसी

अहमदाबाद। गुजरात के अहमदाबाद में गोदरेज इंडस्ट्रीज के केमिकल बिजनेस ने शुक्रवार को 'समागम' प्लेटफॉर्म लॉन्च किया। गोदरेज इंडस्ट्रीज (केमिकल्स) के कार्यकारी निदेशक और मुख्य कार्यकारी अधिकारी विशाल शर्मा ने इस अवसर पर कहा कि %समागम% उद्योग जगत के अग्रणी, निर्माताओं, फॉर्म्युलेटरों, चैनल भागीदारों और क्षेत्र के विशेषज्ञों को एकजुट करने वाला अपनी तरह का पहला मंच है। उन्होंने कहा, बाजार तेजी से विकसित हो रहे हैं इसलिए नवीनता और सहयोग की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक है। विशेषज्ञता और नवीनता की विरासत के साथ हमें अपनी व्यावसायिक पेशकशों से आगे बढ़कर एक नई पहल समागम शुरू करने पर गर्व है। श्री शर्मा ने कहा कि घरेलू केयर, ब्यूटी और व्यक्तिगत देखभाल, ल्यूब्रिकेंट्स और मेटल वर्किंग तरल पदार्थ, खाद्य और पेय पदार्थ, कृषि रसायन, पेंट और कोटिंग्स और अन्य जैसे क्षेत्रों में उभरते बाजार के रुझान, नवाचार और चुनौतियों पर केंद्रित समागम का उद्देश्य लगातार बदलते उद्योग क्षेत्र में सहयोग को प्रोत्साहन देना और व्यापार को बढ़ाना है। बढ़ती मांग, तकनीकी प्रगति, टिकाऊ दृष्टिकोण और नियामक परिवर्तनों के कारण भारत के औद्योगिक क्षेत्र तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं तब समागम हितधारकों को समाधान इस गतिशील वातावरण में आगे बढ़ने के लिए सोल्यूसन तलाशने और अंतर्दृष्टि प्रदान करने के लिए एक मंच प्रदान करता है।

प्रधान सम्पादक, स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक, राजकुमार यादव द्वारा राज आफसेट एबीसी काम्पलेक्स अपोजिट शुभम सिनेमा क्वीनटन रोड कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित कराकर 424-बी वैशाली इंक्लेब सेक्टर 9 इंदिरानगर लखनऊ से प्रकाशित।
समस्त विवाद वाराणसी न्यायलय के अधीन होंगे। फोन नं. 9935781155 E-mail :- info.shakuntimes@gmail.com RNI: UPHIN/2012/45286 प्रधान कार्यालय :- शक्तिपीठ, बरईपुर, सारनाथ, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) पिन कोड - 221007

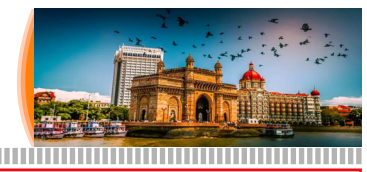

नेपाल में फिर लौट आएगा राजतंत्र?

सड़कों पर आ गई भ्रष्टाचार से परेशान जनता, अर्थव्यवस्था भी बदहाल

एजेंसी

नई दिल्ली। नेपाल में एक बार फिर राजतंत्र की मांग तेज हो गई है। राजशाही का समर्थन करने वाली राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी ने काठमांडू में एक रैली निकाली। इस रैली में बड़ी संख्या में लोग नेपाल का राष्ट्रीय ध्वज लेकर शामिल हुए थे।

पूर्व राजा ज्ञानेंद्र सिंह ने हाल ही में दावा किया है कि वह एक बार फिर देश के लिए सक्रिय भूमिका में आना चाहते हैं। वहीं बात करें प्रधानमंत्री केपी ओली और नेपाली कांग्रेस चीफ शेर बहादुर देउबा की तो नेपाल का फिर से राजशाही की ओर लौटना संभव ही नहीं है। सीपीए-माओवादी सेंटर के चेयरमैन पुष्पकमल दहल प्रचंड ने भी कहा है कि ज्ञानेंद्र सिंह को जनता को मूर्ख बनाना छोड़ देना

चाहिए। उन्होंने कहा, अगर पूर्व राजा को लगता है कि वह बहुत फेमस हैं तो वह अपनी एक पार्टी बना सकते हैं। जनता अगर मौका देगी तो वह फिर से देश की सेवा कर सकते हैं। आरपीपी के समर्थकों का कहना है कि नेपाल की सरकार में भ्रष्टाचार चरम पर है। ऐसे में लोकतंत्र को हटाकर एक बार फिर राजशाही लागू कर देनी चाहिए। नेपाल में 2008 तक राजशाही की ही व्यवस्था थी। वहीं राजशाही खत्म होने केबाद काठमांडू के रॉयल पैलेस को म्यूजियम में तब्दील कर दिया गया था। गुरुवार को पोखरा में ज्ञानेंद्र सिंह ने पूर्व राजा वीरेंद्र सिंह की प्रतिमा का अनावरण किया गया। इस मौके पर भी बड़ी संख्या में लोग मौजूद थे। वहां लोगों ने राजशाही का राष्ट्रगान भी गाया। रिपोर्ट्स की मानें तो राजशाही की मांग करने वालों में बड़ी संख्या युवाओं की है। नेपाल में जब राजशाही का अंत हुआ था तो जनता को लगता था कि लोकतंत्र में देश और जनता दोनों का बहुत भला होने वाला है। हालांकि अब नेपाल की जनता इस व्यवस्था से ऊब रही है। वहीं ज्ञानेंद्र सिंह की पॉपुलरिटी एक बार फिर बढ़ रही है। नेपाल की सरकार पर भ्रष्टाचार के आरोपों के बीच भीलोगों का मोहभंग हो गया है। वहीं सरकार की विदेश नीति भी प्रभावी नहीं रही है। नेपाल लंबे समय से भारत का सहयोगी रहा है। राजशाही के वक्त भारत और नेपाल के बीच मैत्रिसंबंध ज्यादा अच्छे थे। वहीं कम्युनिस्ट शासन में नेपाल की राजनीत में चीन का समर्थन और भारत विरोधी भावना स्पष्ट रूप से दिखाई दी है। नेपाल की सरकार में भारत की गोरखा रेजिमेंट में भर्तियां तक बंद करवा दीं। वहीं जनता को इससे नुकसान हो रहा है। ऐसे में वह पुराने दिनों को याद कर रही है। इसका फायदा राजशाही समर्थक उठाना चाहते हैं और वे जनता के आक्रोश को आंदोलन में बनदलने की फिराक में हैं। राजशाही की मांग करने वाली आरपीपी की बात करें तो नेपाल की संसद में 275 में पार्टी की कुल संख्या 14 ही है।

ऐसे में इस पार्टी का जनाधार मजबूत नहीं कहा जा सकता। नेपाल में 165 चुने हुए सांसद हैं और बाकी के 110 समानुपातिक प्रक्रिया से संसद भेजे गए हैं। नेपाल में अर्थव्यवस्था भी बदहाली से गुजर रही है। डोनाल्ड ट्रंप ने भी नेपाल को आर्थिक मदद रोकने का ऐलान कर दिया है। सरकार कर्ज तले दबी है और यह बोझ बढ़ता ही जा रहा है। इस वित्त वर्ष में नेपाल पर बाहरी कर्ज करीब 2 लाख करोड़ बढ़ चुका है।

संक्षिप्त सामाचार

सुकमा पुलिस अधीक्षक कार्यालय में एक महिला सहित पांच नक्सलियों ने किया आत्मसमर्पण

सुकमा। छत्तीसगढ़ के सुकमा जिले में पुलिस अधीक्षक कार्यालय सुकमा में शुक्रवार को एक महिला सहित पांच नक्सलियों ने पुलिस अधिकारियों के सामने आत्मसमर्पण किया। आत्मसमर्पण करने वाले दो पुरुषों पर 2-2 लाख रूपये का ईनाम घोषित है। जिला सुकमा क्षेत्रान्तर्गत नक्सली संगठन में सक्रिय एक महिला सहित पांच नक्सलियों क्रमशः 01. माड़वी नंदा (पेद्दाबोडकेल आरपीसी सीएनएम अध्यक्ष ईनामी 2 लाख) करंगढ़ सरपंचपारा करकनगुड़ा थाना चिंतलनार जिला सुकमा, मडकम माड़ा (पेद्दाबोडकेल आरपीसी डीएकेएमएस अध्यक्ष ईनामी 2 लाख) करकनगुड़ा सरपंचपारा थाना चिंतालनार जिला सुकमा, महिला कवासी पाले (ग्राम करकनगुड़ा केएमएस अध्यक्ष) करकनगुड़ा थाना चिंतलनार जिला सुकमा, मडकम दसरू (पेद्दाबोडकेल आरपीसी सीएनएम उपाध्यक्ष) भीमापुरम थाना चिंतलनार जिला सुकमा, मडकम नंदा (ग्राम करकनगुड़ा मिलिसिया सदस्य) करकनगुड़ा सरपंचपारा थाना चिंतलनार जिला सुकमा ने नक्सल संगठन को छोड़कर समाज की मुख्यधारा मे जुड़ने के उद्देश्य से पुलिस अधीक्षक कार्यालय, जिला सुकमा के समक्ष बिना हथियार के आत्मसमर्पण किया।

रिश्वत मांगने के आरोप में थानाप्रभारी निलंबित

छपरा। बिहार में सारण के पुलिस अधीक्षक डॉ. कुमार आशीष ने रिश्वत मांगने के आरोप में मुफस्सिल थाना प्रभारी -सह- पुलिस निरीक्षक विशाल आनन्द को निलंबित करते हुए लाइन हाजिर कर दिया है। पुलिस अधीक्षक डॉ. कुमार आशीष ने शनिवार को यहां बताया कि एक ऑडियो क्लिप वायरल हो रहा था,जिसमें मुफस्सिल थाना प्रभारी किसी मामले में रिश्वत की मांग कर रहे थे। उन्होंने बताया कि इस ऑडियो क्लिप की जांच सारण के ग्रामीण पुलिस अधीक्षक शिखर चौधरी से करायी गई (जिसकी सत्यता प्रमाणित होने पर उन्होंने सारण प्रक्षेत्र के पुलिस महानिरीक्षक से मुफस्सिल थाना प्रभारी विशाल आनन्द को निलंबित करने की अनुशंसा की। पुलिस अधीक्षक ने बताया कि पुलिस उपमहानिरीक्षक की अनुशंसा पर विशाल आनन्द को निलंबित कर लाइन हाजिर किया गया है।

ऑफिसर्स ट्रेनिंग अकादमी में भव्य पासिंग आउट परेड का आयोजन

गया। बिहार में गया शहर के गया-बोधगया मुख्य सड़क मार्ग पर पहाड़पुर गांव के समीप स्थित ऑफिसर्स ट्रेनिंग अकादमी (ओटीए) के प्रांगण में आज 26वीं भव्य पासिंग आउट परेड का आयोजन किया गया। इस दौरान कुल 161 जेंटलमैन कैडेट्स पास आउट हुए। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में पूर्वी कमान के उच्च अधिकारी लेफ्टिनेंट जनरल आरसी तिवारी शामिल हुए। इस दौरान उनके साथ गया ओटीए के कमांडेंट लेफ्टिनेंट जनरल सुकृति सिंह दहिया भी मौजूद थे,जहां अधिकारियों के द्वारा परेड की सलामी ली गई। वहीं जेंटलमैन कैडेट्स के द्वारा आकर्षक परेड की प्रस्तुति की गई (वहीं पिपिंग सेरेमनी का भी आयोजन किया गया, जहां अभिभावकों ने सैन्य अधिकारी बने अपने बच्चों के कंधे पर मेडल लगाया। इस दौरान खुशी से उनकी आंखें भर आई, वहीं पिपिंग सेरेमनी के दौरान जेंटलमैन कैडेट्स ने भी एक-दूसरे को गले लगाकर बधाई दी।

पेड़ से टकराकर आग का गोला बनी कार

एक युवक जिंदा जला, 4 लोग घायल

एजेंसी

बालाघाट। मध्य प्रदेश के बालाघाट में भीषण दुर्घटना घटी है। यहां एक पेड़ से टकराने के बाद कार में आग लग गई, जिससे 24 साल के एक व्यक्ति की जलकर मौत हो गई जबकि चार अन्य घायल हो गए। पुलिस ने बताया कि हादसा सुबह करीब 4 बजे मुरमाडी के पास हुआ।

उन्होंने कहा, छत्तीसगढ़ के दुर्ग से पांच युवक बालाघाट जिले के कटंगी में एक शादी में शामिल होने आए थे। शुक्रवार सुबह घर लौटते समय उनकी कार एक पेड़ से टकरा गई और उसमें आग लग गई। स्टेशन हाउस ऑफिसर चंद्र जीत यादव ने बताया कि कार में सवार चार लोग भागने में सफल रहे। जबकि एक की जलकर मौत हो गई। उन्होंने बताया कि सुबह की सैर पर निकले लोगों के एक समूह ने जली हुई कार देखी और रामपायली पुलिस को इसकी सूचना दी।

पुलिस की एक टीम मौके पर पहुंची और वाहन से एक व्यक्ति का जला हुआ शव बाहर निकाला। इंस्पेक्टर ने बताया कि शव पूरी तरह जल जाने की वजह से रामपायली में पोस्टमार्टम नहीं हो सका और उसे जबलपुर भेज दिया गया।

राष्ट्रीय केसीएन क्लब का 16 वां राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ सम्पन्न

शकुन टाइम्स संवाददाता

पालघर। राष्ट्रीय सेवाभावी संगठन केसीएन क्लब का 16वां राष्ट्रीय अधिवेशन भदोही जिले के भदोही थानांतर्गत रयां ब्लॉक की उमरी ग्राम पंचायत में आयोजित किया गया। राष्ट्रीय अधिवेशन कार्यक्रम की अध्यक्षता वरिष्ठ समाजसेवी आध्यात्मिक मार्गदर्शक पंडित अर्जुनधर द्विवेदी ने किया कार्यक्रम का संचालन वेटरन्स इंडिया के राष्ट्रीय जरनल सेक्रेटरी जितेंद्र रॉय ने किया।

कार्यक्रम में प्रमुख अतिथियों में वरिष्ठ सम्पादक व केसीएन क्लब के कार्याध्यक्ष डॉ. कृपाशंकर मिश्र, क्लब के राष्ट्रीय अध्यक्ष नंदन मिश्र त्यागी, वरिष्ठ समाजसेवी कौशलेंद्र उपाध्याय, पूर्व डीएसपी कैप्टन राज द्विवेदी, विकास सिंह, सहित विशिष्ट लोग उपस्थित रहे। सुबह भारत माता की पूजा कर विशिष्ट अतिथियों द्वारा दीप प्रज्वलित कर नारियल तोड़कर

बालिका साक्षी सिंह, सोनम सिंह, ज्योति गौतम के स्वागत गीत व नृत्य से कार्यक्रम की शुरुआत की गई। राष्ट्रीय अधिवेशन के मौके पर क्लब की ओर से निःशुल्क चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया जो दिन भर चलता रहा। इस निःशुल्क चिकित्सा शिविर का लगभग 200 लोगो ने हिस्सा लेकर शिविर का लाभ उठाया। दोपहर में श्रीमती चन्द्रादेवी रणधीर सिंह इन्टरकालेज उमरी भदोही, मीरा सृजन शिक्षण सेवा संस्थान, जय योगेश्वर गुरुकुल विद्यापीठ आदि संगठनों व विद्यालय के माध्यम से तिरंगा यात्रा निकाली गई जिसमें राष्ट्रभक्ति नारे लगाए गए। बाद में अतिथियों पूर्व सैनिकों का सम्मान व विषय पर चर्चा की गई इस मौके पर महिलाओं को वस्त्र वितरण व वृक्षारोपण कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम के समापन के पूर्व फूलों की होली खेलकर सबको होली की बधाई दी गई। कार्यक्रम के अंत में केसीएन क्लब सैनिक प्रकोष्ठ वेटरन्स भारत के राष्ट्रीय अध्यक्ष भोलानाथ सिंह ननवग ने सभी का आभार व्यक्त कर कार्यक्रम समापन की घोषणा की। कार्यक्रम के दौरान संतोष कुमार, उत्तम मिश्र, बालकृष्ण पाण्डेय, जयप्रकाश वर्मा, परशुराम शर्मा , विजेश कुमार वर्मा, अशोक कुमार विश्वकर्मा, एम एच सिंह, ग्राम प्रधान उमरी, शेषधर मिश्र पूर्व प्रधान सहित सैकड़ों पूर्व सैनिक, अधिवक्ता, चिकित्सक, पत्रकार आदि को क्लब द्वारा सम्मानित किया गया।

अमृतसर में करीब 500 ग्राम हेरोइन के साथ दो तस्कर गिरफ्तार

जालंधर। सीमा सुरक्षा बल और पंजाब पुलिस ने एक संयुक्त कराई में अमृतसर जिले के गांव राजाताल, थाना- घरिंडा से 475 ग्राम हेरोइन के साथ दो तस्करों को पकड़ा गया है। बीएसएफ के प्रवक्ता ने शनिवार को बताया कि बीएसएफ खुफिया शाखा द्वारा विकसित और साझा की गई सूचना पर, बीएसएफ ने संदिग्ध क्षेत्र में पंजाब पुलिस के साथ मिलकर एक संयुक्त अभियान चलाया। उन्होंने बताया कि शुक्रवार शाम लगभग 07:00 बजे, जब संयुक्त दल ने देखा कि दो संदिग्ध व्यक्ति मोटरसाइकिल पर आ रहे हैं और नशीले पदार्थों की तलाश कर रहे हैं। अभियान दल ने दोनों तस्करों का पीछा किया गया और उन्हें पकड़ लिया। तलाशी लेने पर उनके कब्जे से संदिग्ध हेरोइन का एक पैकेट (कुल वजन- 475 ग्राम) तथा तीन मोबाइल फोन, एक मोटरसाइकिल (बिना नंबर प्लेट) बरामद की गई।

लॉरेंस बिश्नोई के नाम पर जेडीयू एमएलसी ने दिलवाई थी धमकी, पप्पू यादव का बड़ा दावा

एजेंसी

पटना। बिहार के पूर्णिया से निर्दलीय सांसद पप्पू यादव ने लॉरेंस बिश्नोई गैंग से मिली धमकियों के मामले में बड़ा दावा किया है। उन्होंने मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की पार्टी जनता दल यूनाइटेड (जेडीयू) से एमएलसी नीरज कुमार पर गंभीर आरोप लगाया है। पप्पू यादव ने कहा कि जेडीयू एमएलसी ने ही उन्हें धमकी दिलवाई थी। इस मामले में पूर्व में आरा से गिरफ्तार हुए रामबाबू को नीरज कुमार ने ही पैसे देकर उन्हें धमकी देने के लिए कहा गया था। ताकि लॉरेंस बिश्नोई गैंग से मिल रहीं धमकियों के मुद्दे को डायवर्ट

किया जाए। पप्पू यादव ने शुक्रवार को पटना में प्रेस कॉन्फ्रेंस की। इस दौरान उन्हें धमकी देने के मामले में पूर्व में गिरफ्तार हुआ रामबाबू भी मौजूद रहा। सांसद ने आरोप लगाया कि जेडीयू एमएलसी नीरज कुमार ने पूर्णिया के एसपी पर प्रेशर देकर पीसी करवाई थी। पप्पू यादव ने दावा किया कि रामबाबू को नीरज कुमार ने जेडीयू ऑफिस में बुलाया था। इसके सीसीटीवी फुटेज भी मौजूद हैं। जेडीयू दफ्तर में रामबाबू को ट्रेनिंग दी गई। सिक्योरिटी हॉल में वीडियो बनाया गया और फिर वहीं से धमकी दी गई। पप्पू यादव ने दावा किया कि फर्जी धमकी देने की एवज में रामबाबू को जेडीयू एमएलसी ने चुनाव लड़वाने का भी ऑफर दिया था। सांसद ने दावा किया कि धमकी दिलवाकर रामबाबू को छोड़ दिया गया। पूर्णिया एसपी को फोन कर इनका मोबाइल नंबर दिया गया। वहां के पदाधिकारियों ने इनसे बातचीत की। फिर पटना आकर गाड़ी से रामबाबू को पूर्णिया लेकर गए। आधा घंटा लॉकअप में रखा गया।

31 मार्च तक देश छोड़ दें अवैध प्रवासी

पाकिस्तान का सख्त अल्टीमेटम!

एजेंसी

इस्लामाबाद। पाकिस्तान सरकार ने सभी अवैध विदेशियों को उनके देश वापस भेजने की योजना के तहत अफगान नागरिकता कार्ड (एसीसी) धारकों के लिए स्वेच्छा से पाकिस्तान से जाने की अंतिम तिथि 31 मार्च तय की है। एक आधिकारिक दस्तावेज में यह जानकारी दी गई।

मीडिया में शुक्रवार रात कथित रूप से लीक हुए इस दस्तावेज में संकेत दिया गया है कि इस्लामाबाद और रावलपिंडी में रह रहे एसीसी धारकों को अफगानिस्तान वापस भेजा जाएगा। यह अफगान प्रवासियों के लिए बहु-चरणीय पुनर्वास योजना का हिस्सा होगा।

आतंकवाद के मुद्दे पर इस्लामाबाद और काबुल के बीच बिगड़ते संबंधों के मद्देनजर यह निर्णय लिया गया है और इसका असर उन आठ लाख से अधिक अफगान शरणार्थियों पर पड़ सकता है, जिनके पास एसीसी होने से वे दस्तावेज वाले शरणार्थियों की श्रेणी में शामिल हैं। जबकि सैकड़ों और हजारों लोग बिना दस्तावेज के यहां शरण लिए हुए हैं।

इसमें कहा गया है कि अवैध विदेशी प्रत्यावर्तन कार्यक्रम (आईएफआरपी) को एक नवंबर 2023 से लागू किया गया है।

महिला आरपीएफ कर्मियों के लिए रेलवे की नई कवायद

चुनौतियों से निपटने के लिए देंगे मिर्च स्प्रे

एजेंसी

नई दिल्ली। भारतीय रेलवे ने सुरक्षा में लगी रेलवे सुरक्षा बल की कर्मियों के लिए एक नया फैसला किया है। शुक्रवार को जारी एक सरकारी प्रेस नोट के मुताबिक इन सभी महिला कर्मचारियों को मिर्च स्प्रे के डिब्बे उपलब्ध कराए जाएंगे। रेलवे के मुताबिक यह गैर घातक लेकिन प्रभावी हथियार महिला कर्मियों को अकेले या बच्चों के साथ यात्रा कर रही महिला यात्रियों की सुरक्षा करने में मदद करेगा। चुनौतीपूर्ण स्थितियों से निपटने में मदद करेगा।

रेलवे द्वारा जारी प्रेस नोट में कहा गया कि यह नया कदम भारतीय रेलवे की लैंगिक समावेशिता और महिला सशक्तिकरण और अपने नेटवर्क में बढ़ी हुई सुरक्षा के प्रति मजबूत प्रतिबद्धता को दर्शाता है। यहीं नहीं मिर्च स्प्रे उपलब्ध कराने से महिला आरपीएफ कर्मियों को सुरक्षा की

एक अतिरिक्त परत मिलेगी, जिससे वे खतरों को रोक सकेंगी और आपात स्थितियों को प्रभावी ढंग से संभाव सकेंगी। आरपीएफ के डीजी मनोज यादव ने इस पहल का समर्थन करते हुए कहा कि यह पहल प्रधानमंत्री के महिलाओं को सशक्त बनाने और सार्वजनिक स्थानों को सुरक्षित बनाने के दृष्टिकोण के अनुरूप है। भारतीय रेलवे ने महिला यात्रियों के लिए यात्रा के अनुभव को बेहतर बनाने के लिए लगातार कई उपाय किए हैं। उन्होंने कहा कि हमारी महिला आरपीएफ कर्मी ताकत, देखभाल और लचीलेपन का प्रतीक हैं। उन्हें मिर्च स्प्रे के डिब्बे से लैस करके, हम उनका आत्मविश्वास और परिचालन क्षमता बढ़ा रहे हैं, साथ ही यह स्पष्ट संदेश दे रहे हैं कि यात्रियों की सुरक्षा - विशेष रूप से महिलाओं की सुरक्षा हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है।

नाटो प्रमुख बोस्निया का करेंगे दौरा

मॉस्को। नाटो महासचिव मार्क रूटे 10 मार्च को बोस्निया और हर्जेगोविना का दौरा करेंगे, जहां वह उच्च स्तरीय बोस्नियाई अधिकारियों और यूरोपीय संघ के प्रतिनिधियों से मुलाकात करेंगे तथा बाल्कन राष्ट्र में नाटो मिशन का दौरा करेंगे। यह जानकारी नाटो ने शुक्रवार को एक बयान में दी। बयान में कहा गया कि महासचिव बोस्निया और हर्जेगोविना के उच्चस्तरीय अधिकारियों से मुलाकात करेंगे, जिनमें अध्यक्ष और प्रेसीडेंसी के सदस्य, मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष, विदेश मंत्री, रक्षा मंत्री और कार्यवाहक सुरक्षा मंत्री शामिल हैं। श्री रूटे कैंप बुटमीर में नाटो मुख्यालय साराजेवो (एनएचक्यूएसए) का भी दौरा करेंगे, जहां वे एनएचक्यूएसए के कमांडर, बोस्निया और हर्जेगोविना के उच्च प्रतिनिधि और यूरोपीय संघ के प्रतिनिधियों से मुलाकात करेंगे। श्री रूटे दोपहर 12 बजे बोस्निया और हर्जेगोविना के राष्ट्रपति पद के प्रतिनिधियों के साथ एक संयुक्त संवाददाता सम्मेलन करेंगे और दोपहर बाद साराजेवो विश्वविद्यालय में भाषण देंगे।

RNI : UPHIN/2012/45286

शकुन टाइम्स (राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक समाचार पत्र)

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा पंजीकृत

YouTube shakuntimes

आवश्यकता है

भारत के समस्त राज्यों व जिलों में अनुभवी और तेज तर्रार प्रेस रिपोर्टरों की

यदि आप में है गलत को गलत कहने की हिम्मत तो शकुन टाइम्स में आपका स्वागत है

नोट : प्रिंट एवं डिजिटल मीडिया में एक साथ कार्य करने का सुनहरा अवसर

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :- 9415052283, 9506320127

संपर्क कार्यालय : शक्तिपीठ,सारनाथ,वाराणसी (उ.प्र.) 221007